चिंताओं से छुटकारे का मार्ग

◆

लेखक :

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

◆

प्रकाशक :

युग निर्माण योजना,

गायत्री तपोभूमि, मथुरा- २८१००३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

◆

प्रथम बार] २००४ [मूल्य : 5-00 रुपये

चिंताओं से छुटकारे का मार्ग

▲

चिंता के विषय में विचारणीय तत्त्व

चिंता मन में केंद्रीभूत नाना दुःखद स्मृतियों तथा भावी भय की आशंका से उत्पन्न मानव मात्र का सर्वनाश करने वाली, उसकी मानसिक, शारीरिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों का ह्रास करने वाली दुष्ट मनोविकार है। एक बार इस मानसिक व्याधि के रोगी बन जाने से मनुष्य कठिनता से इससे मुक्ति पा सके हैं, क्योंकि अधिक देर तक रहने के कारण यह गुप्त मन में एक जटिल मानसिक भावना ग्रंथि के रूप में स्थित रहती है। यहीं से हमारी शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं को परिचालित करती है। आदत बन जाने से, चिंता नैराश्य का रूप ग्रहण कर लेती है। ऐसा व्यक्ति निराशावादी हो उठता है। उसका संपूर्ण जीवन नीरस, निरुत्साह और असफलताओं से परिपूर्ण हो उठता है।

चिंता का प्रभाव संक्रामक रोग की भाँति विषैला है। जब हम चिंतित व्यक्ति के संपर्क में रहते हैं, तो हम भी निराशा के तत्त्व खींचते हैं और अपना जीवन निरुत्साह से परिपूर्ण कर लेते हैं। "बहुत से व्यक्ति कहा करते हैं कि भाई अब हम थक गए, बेकाम हो गये। अब परमात्मा हमें संभाल ले तो अच्छा है।" वे रोने को रोते रहते हैं कि हम बड़े अभागे हैं कि कमनसीब हैं, हमारा भाग्य फूट गया है, दैव हमारे प्रतिकूल हैं, हम दीन हैं, गरीब हैं। हमने सख्तोड़ परिश्रम किया, किंतु भाग्य ने साथ नहीं दिया। ऐसी चिंता करने वाले व्यक्ति यह नहीं जानते कि इस तरह का रोना रोने से हम अपने हाथ से अपने भाग्य को फोड़ते हैं, उन्नति रूपी कौमुदी को काले बादलों से ढक लेते हैं।"

१८७१ की बात है, अमेरिका के एक चिकित्साशास्त्र के विद्यार्थी ने इक्कीस शब्द पढ़े, जिनका उसकी चिंता-व्याधि-पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा। वे अपनी फाइनल परीक्षा के विषय में चिंतित थे। क्या करना चाहिए ? जीवन में किस प्रकार प्रविष्ट हों ? जीविका उपार्जन कैसे चले ? इत्यादि चिंता के अनेक विषय उनके पास थे। वे इक्कीस शब्द, जिन्होंने उसके जीवन की काया पलट कर दी, ये थे--

"हमारा प्रधान कार्य उन बातों के लिये चिंतित होना नहीं है, जो अंधकारमय भविष्य के गर्भ में छिपी हैं, प्रत्युत हमें वे कार्य करने हैं, जो स्पष्टतः हमारे हाथ में हैं।"

बयालीस वर्ष पश्चात् सर विलियम औसलर ने येल विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के समक्ष भाषण देते हुए कहा था— 'मेरी उन्नति का रहस्य यह है कि मैं दिन के कमरे' में बंद रहा हूँ। दिन के कमरे' का क्या तात्पर्य था ? सर विलियम औसलर ने अटलांटिक सागर पार किया था। जिस जलयान द्वारा यह यात्रा की गई थी, उसमें उन्होंने देखा था कि कप्तान बड़ी सावधानी से मशीन के पुर्जों को देखभालकर भिन्न-भिन्न कमरों को इस प्रकार बंद कर रहा था, जिससे कि जल कहीं भी प्रविष्ट न हो सके। यही बात स्पष्ट करते हुए औसलर साहब ने विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों से कहा—

"मैं चाहता हूँ कि आप लोग मस्तिष्क रूपी मशीन के कमरे बंद कर रहना सीखें। आपके जीवन में नाना पुरानी दुःखद, कटु, चुभने वाली स्मृतियाँ दबी हुई पड़ी हैं। उनमें नाना प्रकार की बेवकूफियाँ, अशिष्टताएँ, मूर्खता से युक्त कार्य भरे पड़े हैं। बटन दबाकर अतीत की ये कड़वी अनुभूतियाँ बंद कर दीजिए। मन-मंदिर के किवाड़ उनके लिए बंद कर दीजिए। उनकी दुःख भरी पीड़ा, वेदना, हाहाकार की काली परछाई वर्तमान जीवन पर मत आने दीजिए। इस मन के कमरे में इन मृत कलों को, भूतकाल के मुर्दों को दफना दीजिए। इसी प्रकार मन का वह कमरा भी बंद

कर दीजिए, जिसमें भविष्य के लिए मिथ्या भय, शंकाएँ, निराशापूर्ण कल्पनाएँ एकत्रित हैं। इस अजन्मे भविष्य को भी मन की कोठरी में दृढ़ता से बंद कर दीजिए। मरे हुए अतीत को अपने मुर्दे दफनाने दीजिए। आने वाले डरावने "कलों" को भी मन की कोठरी से न मिलने दीजिए। बीता हुआ दुखदायी 'कल' और काली-काली भयंकर डरावनी शक्ल दिखाकर भविष्य से आने वाले 'कल' का बोझ इतना अधिक होगा कि आपका वर्तमान कटु नीरस और चिंता से परिपूर्ण हो उठेगा। आप तो 'आज' की परवाह कीजिये। 'आज' -यह मदमाता, उल्लासपूर्ण 'आज' आपकी अमूल्य निधि है। यह आपके पास है। आपका साथी है। 'आज' की प्रतिष्ठा कीजिए। उससे खूब खेलिए, कूदिए, मस्त रहिये और उसे अधिक से अधिक उल्लासपूर्ण बनाइये। 'आज' जीवित चीज है। 'आज' में वह शक्ति है, जो दुखद कल को भुलाकर भविष्य के मिथ्या भयों को नष्ट कर सकता है। 'दिन के कमरे' में ही बंद रखिये। आने वाले या बीते हुए 'कल' के ताले बंद रखिये। आप चिंता से मुक्त रहेंगे।"

कल की चिंता घातक है—

क्या औसलर साहब का तात्पर्य था कि भविष्य के लिए कुछ न सोचें या विचारें ? नहीं, कदापि नहीं। उनका तात्पर्य यह था कि आगे आने वाले 'कल' के लिए, व्यर्थ ही चिंता करने से काम न चलेगा, वरन् अपनी समस्त बुद्धि, कौशल, युक्ति और उत्साह से आज का कार्य सर्वोत्कृष्ट रूप में संपन्न करने से चलेगा। यदि हम 'आज' का कार्य कर्तव्य समझकर संपूर्ण एकाग्रता और हानिरहित होकर पूर्ण करते हैं, तो हमें 'कल' की (भविष्य की) चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार आप उज्ज्वल भविष्य का निर्माण कर सकते हैं।

ईसाइयों में प्रार्थना का एक अंश इस प्रकार है, "हे प्रभु ! हमें आज का भोजन दीजिए। हमें आज समृद्ध कीजिए।" स्मरण रखिए, प्रार्थना का तात्पर्य है कि 'आज' हमें भोजन, आनंद, समृद्धि

प्राप्त हो। इसमें न तो बीते हुए कल के लिए शिकायत है, न आने वाले 'कल' के लिए याचना या भय। यह प्रार्थना हमें 'आज' (वर्तमान) का महत्त्व स्पष्ट करती है। यदि हम आज को आदर्श रूप में अधिकतम आनंद से व्यतीत कर लें, तो हमारा भावी जीवन स्वयं समुन्नत हो सकेगा।

सैकड़ों वर्ष पूर्व एक निर्धन दर्शनवेत्ता ऐसे पर्वतीय प्रदेश में घूम रहा था, जहाँ लोग कठिनता से जीविकोपार्जन कर पाते थे। एक दिन उसने उन्हें एकत्रित किया और एक लघु भाषण में कहा—"कल" की चिंताओं में निमग्न आत्माओं ! कल के भय, चिंताओं और अंधकार में क्यों इस सुनहरे वर्तमान को नष्ट कर रहे हो ? कल स्वयं अपनी चिंता करेगा। यदि तुम आज को अधिकाधिक आनंद, संतोष और आदर्श रूप में व्यतीत कर सको, तो उत्तम है। परमेश्वर स्वयं तुम्हारे भविष्य को समुन्नत करने में प्रयत्नशील है।"

ईसा महान् के उन शब्दों "कल की चिंता मत करो" का वास्तविक मर्म बहुत कम लोग समझते हैं। कल की चिंता मत करो ? आप कहेंगे कल की चिंता कैसे न करें ? हमारे परिवार हैं ? हमारे बच्चों की शिक्षा, वस्त्र, भोजन, मकान की विषम समस्याएँ हैं ? कल हमें उनके विवाह करने हैं ? क्या रुपया एकत्रित किए बिना काम चलेगा ? हमें बीमा पॉलिसी में रुपया जोड़ना चाहिए ? हमारी आज नौकरी लगी है, कल छूट भी सकती है ? आज हम स्वस्थ हैं कल बीमार पड़ेंगे, तो कैसे काम चलेगा ? वृद्धावस्था में हमारा क्या होगा ?

इस प्रकार की बातें ठीक हैं। एक विचारशील मस्तिष्क में ये विचार आने चाहिए। हमारा सुझाव है कि आप 'कल' के लिए अपने आपको शक्तिशाली बनाने के लिए, योग्यतर, स्वस्थ, आर्थिक दृष्टि से संपन्न होने के लिए, नई योजनाओं को कार्यान्वित करें भावी जीवन के लिए जितना संभव हो तैयारी कीजिए। परिश्रम, उद्योग, मिलनसारिता द्वारा समाज में अपना स्थान बनाइए,

पर चिंता न कीजिए। भोजन बनाकर दूरदर्शितापूर्ण कार्य करना एक बात है, चिंता करना दूसरी बात है। चिंता से क्या हाथ आवेगा ? जो रही-सही शक्ति और मानसिक संतुलन है, वह भी नष्ट हो जायेगा। चिंता तो आपके उत्साह, शक्ति और प्रसन्नता को पंगु कर देगी। जिस कठिनाई या प्रतिरोध को आप अपनी व्यक्तिगत शक्तियों को बखूबी जीत सकते थे, वह पर्वत सदृश कठिन प्रतीत होगी। चिंता तो आपके सामने एक ऐसा अंधकार उत्पन्न करेगी, कि आपको उस महान् शक्ति केंद्र का ज्ञान न रह जायगा, जो आदिकर्ता परमेश्वर ने आपके अंग-प्रत्यंग में छुपा रखा है।

चाहे युद्ध में, बीमारी, दिवाला या दुःखद मृत्यु के अंधकार-पूर्ण रुदन में, शुभ चिंतन और अशुभ चिंतन में केवल यह अंतर है—अच्छा विचार वह है, जो कार्य-कारण के फलों को तर्क की कसौटी पर परखता है, दूर की देखता है और किस कार्य से भविष्य में क्या फल होगा, यह संबंध देखकर भावी उन्नति की योजनाएँ निर्माण करता है। सृजनात्मक विचार भावी निर्माण में पुरानी गलतियों की सजा के अनुभवों और संसार की कठोरताओं को देखभाल कर अपनी उन्नति के लिए योजना प्रदान करता है। अच्छे चिंतन में संग्रहीत सांसारिक अनुभवों के बल पर उत्साह और आशा का शुभ्र आलोक है, कार्यनिष्ठा और साहस का बल है, शक्ति और कुशलता का पावन योग है, कार्य से भागकर नहीं, वरन् गुत्थियों को सुलझाकर अपूर्व सहनशक्ति का परिचय देने का विधान है।

बुरी विचारधारा का प्रारंभ ही डर और घबराहट से होता है। कठिनाइयाँ आ रही हैं, हमें वह कार्य करना ही पड़ेगा, जो साधारणतः हमने नहीं किया है, पैसा और शक्ति पास में नहीं रहेगी, फिर क्या किया जायेगा ? ऐसी फालतू गलत कल्पनाएँ आकर शक्ति और उत्साह का विनाश कर देती हैं। मानसिक संतुलन नष्ट हो जाता है। इच्छाशक्ति और मनोबल पिछली

गलतियों की स्मृति और वेदनाओं से नष्ट या पंगु हो जाती हैं। पश्चात्ताप और आत्मग्लानि के अंधकार में ऐसा व्यक्ति रही-सही शक्ति को भी खो बैठता है। ये गलत कल्पनाएँ चिंता जैसी राक्षसी की ही संतानें हैं।

एक बार एक विद्वान् बीमार पड़े। कारण, सिर्फ चिंता। चिंता ने उन्हें खाट पकड़वा दी। हालत खराब होने पर शफाखाने गए। वहाँ उन्हें फौजी डॉक्टर ने एक बड़े महत्त्व की बात बताई थी। उन्होंने कहा था—

"मेरे प्रिय व्यक्ति ! मैं चाहता हूँ कि तुम जीवन को एक पुराने टाइप की रेत की कणों से संचालित घड़ी की तरह समझो। जिस प्रकार एक छोटे से छेद से होकर एक-एक बालू का कण नीचे गिरता है और बहुत देर में घड़े भर के कण नीचे ढेर हो जाते हैं। ये बालू के कण घड़ी भर में ऊपर बहुत बड़ी संख्या में भरे हुए रहते है, लेकिन एक-एक कर उस लघु छेद से नीचे गिरते रहते हैं। चाहे हम या आप कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, एक से अधिक रेत का कण उस छोटे छेद से अधिक न गिरेगा। यदि अधिक निकालने का प्रयत्न किया जायेगा, तो घड़ी में कोई न कोई खराबी अवश्य आ जायगी। तुम, मैं तथा हममें से प्रत्येक व्यक्ति इसी प्रकार की रेत की घड़ी की तरह हैं। प्रातः जब हम शय्या त्याग करते हैं, तो हमारे सामने सैकड़ों कार्य करने के लिए होते हैं, जिन्हें हम उस दिन पूर्ण कर डालना चाहते हैं, किंतु यदि हम उन्हें एक-एक कर न लें और दिन में धीरे-धीरे उन्हें न करें, तो व्यर्थ की चिंता के भार से हम अपनी शरीर रूपी घड़ी को तोड़ डालेंगे। हमारा शारीरिक और मानसिक संस्थान कार्य भार की अनिश्चितता से असंतुलित हो जायगा।"

"मैंने इसी योजना को सदैव अपनाया है—रेत का एक कण ही एक बार में घड़ी से निकले .... एक बार में एक ही कार्य का भार मन पर रहे। मैं शेष कार्यों को क्षण भर के लिए मन

की किसी कोठरी में बंद देता हूँ। उसके विषय में चिंतित रहकर शक्ति का क्षय नहीं करता हूँ।"

आजकल पागलखानों तथा शफाखानों में मानसिक रोगों के जितने बीमार आते हैं, उनमें से अधिकांश ऐसे होते हैं, जो चिंता भार के कारण मन को संतुलित नहीं रख सके हैं। उनके मस्तिष्क में बीते हुए जीवन के हृदयद्राविक हाहाकार, कल्पना मौन रुदन हैं। प्रिय व्यक्ति के बिछोह की आकुलता, पीड़ा और दुस्सह वेदना है। हजारों रुपयों की हानि की कसक है। समाज में दूसरों द्वारा की हुई मानहानि की जलन है, समाज, अफसर, रूढ़ियों तथा पुलिस द्वारा किये गये अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह है। कोई पिटते-कुटते ऐसे जड़ निराशावादी हो गये हैं कि उनका जैसे आनंद का स्रोत ही सूख गया है। इन्हीं अनुभवों के बल पर वे भविष्य में भय से उत्पन्न दुष्प्रवृत्तियों के शिकार हैं। अपनी प्रतिकूलता के दूषित विचार उनके अंतःकरण की उत्तम योजनाओं को क्षण भर में धूल में मिला देते हैं। मनुष्य की मानसिक शक्तियों का क्षय कर चिंता में फँसाने वाला भय महाराक्षस है। भय की प्रथम संतान चिंता है। इन स्मृतियों तथा भावी दुःस्वप्नों का द्वंद्व मानसिक रोगों के रूप में प्रकट होता है। अव्यक्त आशंकाएँ, दुश्चिंताएँ, कुकल्पनाएँ संस्काराधीन होती हैं। वे रोग के रूप में उद्‌भूत होकर किसी प्रकार अपनी परितृप्ति चाहती हैं।

संसार में दुःख, चिंता, व्यग्रता का कारण यह है कि हम चिंता को "आज" अर्थात् वर्तमान को अच्छी तरह व्यतीत करने में न लगाकर निरंतर स्मृति और आशा के पलड़ों में झूलते रहते हैं। भविष्य के लिए व्यर्थ की हैरानी, दुःख-क्लेश, बीती हुई बातों के लिए, शोक न होने वाली घटनाओं के लिए मोह में फँसे रहते हैं।

राबर्ट लुई स्टीवेन्सन ने एक स्थान पर लिखा है, "चाहे किसी का बोझ कितना ही भारी क्यों न हो, प्रत्येक व्यक्ति अपना बोझ सांयकाल तक ढो सकता है। हममें से हर एक व्यक्ति शाम तक अपना कठिन से कठिन कार्य कर सकता है, सिर्फ एक दिन

के लिए। हममें से प्रत्येक व्यक्ति मधुरता से, सहिष्णुता से, प्रेम से, पवित्रता से शाम तक का जीवन तो व्यतीत कर ही सकता है और यही जीवन है जैसा आज बीता है, वैसा ही कल भी व्यतीत होगा, निश्चय जानिये।"

डेल कार्नेगी का विचार है, "मनुष्य भी कैसा मूर्ख जीव है ? वह जीवन के सुख को भविष्य के लिए धकेलता चलता है। क्षितिज के उस पार सुदूर प्रदेश में रहने वाले किसी गुलाब के पुष्पों से परिपूर्ण उद्यान के सपने देखा करता है, जबकि उसकी खिड़की के नीचे समीप ही बाहर गुलाब अपनी सुवास फैलाते रहते हैं।"

जो सुख-समृद्धि पास है, आज के जीवन से जो आनंद प्राप्त किया जा सकता है, उस पर ध्यान न दें, दूर के सुख की आशा करने का दूसरा अभिप्राय यह है कि आप आज का सुख तो नष्ट कर ही रहे हैं, जबकि भविष्य के लिए आपको पूरा विश्वास तक नहीं है। जो केवल आशाओं के सहारे रहता है, शीघ्र ही वह भूखा मर जायगा।

हम न जाने क्यों ऐसे मूर्ख बन जाते हैं ? "आज" की उपयोगिता को क्यों नहीं समझते ?

बच्चा कहता है, "जब मैं युवक बनूँगा, तो बड़ा आनंद रहेगा। खूब मस्ती से खेलूँगा, खाऊँगा, मजा लूँगा।" युवक कहता है कि "जब मैं पढ़-लिखकर विद्वान् बन जाऊँगा, तो संसार का सुख लूटूँगा।" पढ़-लिखकर कहता है, "जब मेरा विवाह हो जायगा, तो बड़ा आनंद रहेगा।" नौकरी या रोजगार मिलता है, विवाह भी हो जाता है, पर आनंद की अतृप्त लालसा और आगे बढ़ती चलती है। वह कहता है, "कुछ रुपया संग्रह कर लूँ, मकान बना लूँ, बाल-बच्चों की शिक्षा, विवाह इत्यादि से निपट लूँ, तब सबसे निवृत होकर सांसारिक आनंद लूँगा। धीरे-धीरे जीवन आगे की लालसा में वर्तमान को चिंताशील, कटु संघर्षों से परिपूर्ण बनाता हुआ व्यतीत होता है। "कल" की चिंता में "आज" मरते जाते हैं। गृहस्थ कहता

है, "नौकरी से रिटायर होकर पेंशन मिलने पर जब कोई चिंता न रहेगी, तो मजा करेंगे। और जब ५० वर्ष की आयु में शिथिल शरीर और टूटी हुई आशा लेकर पेंशन मिलती है, तो एक ऐसा आलस्य, शैथिल्य उसके मन और शरीर पर आकर अपना प्रभाव जमा लेता है कि वह कुछ नहीं कर पाता। अब उसे अनुभव होता है जैसे उसने कुछ बहुमूल्य वस्तु खो दी है। कुछ बहुमूल्य चीज, जिसे वह वापस नहीं ले सकता, उसके हाथ से निकल गई है। यह उसका जीवन है, जो उसके हाथ से निकल गया है। एक-एक दिन कर उसने प्रत्येक दिन का आनंद उल्लास भी नष्ट कर दिया तथा बाद में भी उसे कुछ हाथ न आया। इसी प्रकार कभी न प्राप्त होने वाली योजनाओं, मिथ्या कल्पनाओं, मोह में हम अपने वर्तमान की निर्मम हत्या करते चलते हैं। यदि प्रत्येक 'आज' का सम्मान करें, तो यह 'आज' हमें जीवन का सर्वोपरि आनंद प्रदान कर सकता है। जो कल संदिग्ध, अस्पष्ट धूमिल है। जिसका होना भी निश्चय नहीं है, जिसके मध्य में पर्याप्त समय है, उसके चिंतन में क्यों अपने वर्तमान को कटु बनाया जाए ?

आप अतीत की चिंताएँ, जिनका आपके जीवन से कोई संबंध नहीं है। त्याग दीजिए। उन्हें मरा हुआ समझिए। भविष्य के मिथ्या भय में मत लिप्त रहिए। आज को अच्छे से अच्छे रूप में व्यतीत कीजिए। पुरानी कटु अनुभूतियों की स्मृति मत लाइये। आज से ही जीवन का रस और आनंद लेना प्रारंभ कर दीजिए। किसी सुदूर भविष्य की आशा में आज को कटु न बनाइये।

परिणाम को ध्यान में रखिए

श्री विलिस कौरियर का चिंता से बचने की बड़ी मनोवैज्ञानिक रीति थी। वह तीन भागों में विभाजित की जा सकती है। वे पहले चिंतनीय परिस्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण करते थे। "मैं किसलिए चिंतित हूँ ? क्या ये भय या आशंकाएँ सत्य हो सकती हैं ? अच्छा, यदि सत्य हो सकती है तो इनका अंतिम दुष्परिणाम क्या हो सकता है ? इससे मेरी मृत्यु नहीं हो सकती, कोई मुझे

फाँसी पर चढ़ा नहीं सकता तो फिर मैं यह मान लेता हूँ कि इसका सबसे बुरा परिणाम यह हो सकता है।"

यह मानकर कि अंतिम दुष्परिणाम यह हो सकता है, वे उसे अच्छा बनाने का प्रयत्न करते। अब इस विषम स्थिति में बात को संभालने के लिए मैं अधिक से अधिक क्या कर सकता हूँ ? यह सोचते। वे सोच-विचार कर उस स्थिति को अच्छा बना ही लेते थे। परिस्थिति के दमन में, हालत को अच्छा बनाने में उनकी संपूर्ण शक्तियाँ लग जाती थीं। चिंता करने के स्थान पर उन्हें मानसिक और शारीरिक प्रयत्न द्वारा स्थिति को सुधारने की ओर विशेष ध्यान रहता था।

इस गुर में सबसे अच्छी बात यह है कि यह चिंता के स्थान पर हमें कार्य करने की प्रेरणा देता है। जब हमने सबसे बुरे दुष्परिणाम को मानसिक जगत् में संभाल लिया, तो मानसिक तनाव दूर हो गया समझिए। चिंता के काले बादल दूर हुए, विचार का प्रकाश फैल गया। लाखों व्यक्ति चिंता तो किये जायेंगे। शरीर को सुखा डालेंगे, आत्महत्या की बात सोचेंगे, पर चिंता के कारणों का विश्लेषण कर उसे दूर करने का, उससे संघर्ष करने का प्रयत्न नहीं करते।

एक बार मान लीजिए कि नतीजा इस खराबी तक जा सकता है। अब जब यह दुष्परिणाम होना ही है, तो चिंता कर अपने मन और शरीर को शिथिल करने के स्थान पर प्रयत्न, सोच विचार, योजना निर्माण या मित्रों की सहायता से इस स्थिति को अच्छा बनावें, तभी लाभ है न ? जब आप शांति से मानसिक संतुलन स्थिति रखकर चिंता से मुक्त होने का मार्ग सोचेंगे, तो निश्चय जानिये, कोई मार्ग अवश्य निकल आयेगा।

जो व्यापारी वर्ग के व्यक्ति चिंता से मुक्ति के उपाय नहीं जानते, वे अल्पायु में मृत्यु के शिकार होते हैं। यही हाल गृह पत्नियों, मवेशी डॉक्टरों, सट्टे वाले, ठेकेदारों, जमींदार और किसानों का होता है, उन्हें भविष्य में क्या होगा ? हानि न हो जाय ? यदि हानि

हुई तो कैसे सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी ? लोग उँगली उठावेंगे इत्यादि मिथ्या भय लगे रहते हैं। मानसिक चिकित्सालयों में ७० प्रतिशत व्यक्तियों की चिंताओं का मूल कारण मिथ्या भय है। वे ऐसी बातों से डरते रहते हैं, जो कभी न होने वाली हैं।

भय चिंता उत्पन्न करता है। जो होना है, वह तो होगा ही। व्यर्थ भय भी क्यों किया जाए ? भय एक प्रकार का बंधन है। बंधन में रहना तो सबसे बुरी गुलामी है। डॉ० गौबर लिखते हैं, "चिंता से शारीरिक विकार उत्पन्न होते हैं। चिंता आपके शरीर में एक प्रकार का तनाव उत्पन्न करती है और मन में घबराहट की स्थिति रखती है। आपके पाचक-रस विकृत हो जाते हैं। कभी-कभी इससे पेट में घाव हो जाते हैं।" डॉ० हैराल्ट सी० हैबिन ने १७६ व्यापारियों के शरीरों की जाँच की और यह निष्कर्ष निकाला कि उनकी औसत आयु ४४·३ प्रतिशत होती है। इनमें से एक तिहाई मानसिक तनाव और असंतुलित मन के कारण हृदय रोग, पाचन क्रिया में विकार, पेट में घाव और हाई ब्लड प्रेशर के शिकार रहते हैं।

जो व्यापारी आंतरिक शक्ति को भंग नहीं होने देते, हानि-लाभ के बहाव को ऊपर से बह जाने देते हैं, वे स्नायु शिथिलता से मुक्त रहते हैं। रुपया एक बाह्य वस्तु है। हानि-लाभ चलेगा। इससे आंतरिक शांति भंग नहीं होनी चाहिए।

क्या एक शोरगुल से भरे हुए शहरी जीवन में आप मानसिक संतुलन स्थिर रख सकते हैं ? हमारा उत्तर है 'अवश्य'। झंझटों और नाना प्रकार के शोरगुल में भी आंतरिक शांति संभव है। यह एक मानसिक अभ्यास है। एक बार अभ्यास कर लेने के पश्चात् बाह्य हलचलों से वह भंग नहीं होती। हम प्रायः इस ओर प्रयत्न नहीं करते।

थोरो नामक विद्वान् ने लिखा है, "मनुष्य यह नहीं जानते कि उनमें वह शक्ति है, जिसके द्वारा वे अपने को परिस्थितियों के ऊपर रख सकते हैं। यदि हम अपने आदर्शों के अनुकूल जीवन की दिशा में बढ़ते रहें तथा आत्म विश्वास रखें तो हमें अप्रत्याशित सफलता लाभप्रद होगी।'

प्रत्येक व्यापारी को व्यापारी क्षेत्र में प्रविष्ट होने से पूर्व यह सौगंध ले लेनी चाहिए—"मैं चिंता नहीं करूँगा ! हानि होने पर चिल्लाऊँगा नहीं। यदि कोई कठिनाइयाँ भी आयेंगी, तो क्षेत्र छोड़कर भागूँगा नहीं, वरन् युद्ध करूँगा। मैं विजयी होने जा रहा हूँ। मुझे जीवन का आनंद लूटना है।"

अतः चिंता न करें। विषम परिस्थितियों से अपने को ऊँचा उठाने का प्रयत्न करें। चिंता में व्यर्थ ही हाथ-पाँव फूल जायेंगे और रही सही शक्ति भी विलुप्त हो जायेगी। चिंता जैसी पिशाचिनी को दूर ही रखना उचित है। उसके वश में हो निष्क्रिय हो जाने की अपेक्षा कार्य और योजना द्वारा उसे दबा देना वीर पुरुषों का कार्य है।

चिंता का विश्लेषण किया जाए

किप्लिंग की एक कविता है, जिसका मूल आशय है, 'मेरे चार सेवक हैं। उन्होंने मुझे वह सब कुछ सिखाया है, जो मैं आज जानता हूँ। उनके नाम हैं—'क्या' ? क्यों ? कब ? कैसे ? कहाँ ? कौन ? किप्लिंग का तात्पर्य यह है कि मनुष्य का संपूर्ण ज्ञान इन्हीं के द्वारा बढ़ता और परिपक्व होता है।

जब कभी चिंता आपको परेशान करे, तो तुरंत मनः-विश्लेषण द्वारा उसके कारणों की खोज कीजिए। (१) मालूम कीजिए कि वास्तविक बात क्या है ? (२) इन तथ्यों को पृथक्-पृथक् रख लीजिए (३) किसी निश्चय पर शीघ्र ही आ जाइये (४) उस निश्चय पर तुरंत कार्य करना प्रारंभ कर दीजिये।

आप कहेंगे, यह भी कोई बात हुई। किंतु स्मरण रखिए, अरस्तू जैसा दार्शनिक इसी कार्य प्रणाली पर काम किया करता था। उसी ने संसार को इस योजना की शिक्षा प्रदान की है।

प्रथम नियम—तथ्यों को ठीक-ठीक मालूम कीजिए। जब तक आप बात को पूरी तरह नहीं समझते, उससे मुक्ति की बात कैसे सोच सकते हैं ? पूरी-पूरी जानकारी वह चीज है, जहाँ से

चिंता दूर करने का काम प्रारंभ होता है। तथ्यों की गड़बड़, सब कुछ मिला-जुला अंधकारपूर्ण रहने से एक मिथ्या भय मन में उदित हो जाता है, जिसमें हमें कुछ भी स्पष्ट नजर नहीं आता। हम ऐसी-ऐसी विषम बातें सोचते हैं, ऐसी-ऐसी कल्पनाओं से भयभीत होते हैं, जो मूल समस्या से किसी प्रकार भी संबंधित नहीं होती। अपनी समस्याओं को विचार और तर्क द्वारा पृथक्-पृथक् कर डालने से हटकर हम मन ही मन एक गुप्त मिथ्या भय से परेशान रहते हैं। यह अंधकार मिथ्या भय का फल है। जो व्यक्ति अपनी चिंता का विश्लेषण कर लेता है, उसकी चिंता उसी प्रकार उड़ जाती है जैसे उबलता हुआ बर्तन खोलने से भाप उड़ जाती है। जैसे एक वकील अपने मुकदमे के लिए तथ्यों की तलाश करता है, वैसे ही निष्पक्ष होकर आप भी अपने व्यक्तित्व की समस्याओं को परखें!

"मैं किसलिए चिंता कर रहा हूँ ? मैं उसके लिए क्या कर सकता हूँ ? मैं इनसे कैसे बचूँ ?" इन प्रश्नों के उत्तर कागज पर लिख डालिए। कितने ही व्यक्ति किसी निश्चय पर नहीं आ पाते। 'यह करूँ या वह करूँ ?' इसी शशोपंज में रह जाते हैं। यह स्थिति चिंता उत्पन्न करने वाली है। यदि जल्दी निश्चय कर लिया जाए, तो आसानी से चिंता से बचा जा सकता है। संसार में चिंता का कारण यह है कि लोग बिना मूल कारणों का विश्लेषण किए बिना ही अंधकार की स्थिति में निर्णय करने का प्रयत्न करते हैं। उनके निर्णय के आधार प्रायः कच्चे होते हैं।

चिंताएँ नाना रूपों तथा विषयों की होती हैं। मुख्य रूप से हम इन्हें निम्न विभागों में बाँटते हैं—(१) शारीरिक चिंताएँ, (२) सांसारिक चिंताएँ और (३) धार्मिक चिंताएँ। स्थूल रूप में यह कहा जा सकता है कि सांसारिक चिंताएँ सबसे अधिक लोगों को सताती हैं। उन्हीं से शारीरिक तथा धार्मिक चिंताओं की उत्पत्ति होती है, अतः सर्व प्रथम उन्हीं पर विचार करें।

सांसारिक चिंताएँ—

इस वर्ग में अनेक छोटी-छोटी बातें सम्मिलित हैं। सर्वप्रथम आर्थिक चिंताएँ हैं। आज के जीवन में दो तत्त्व मुख्य रूप से महत्त्वपूर्ण बन गये हैं—रुपया तथा वासना। अधिकांश व्यक्तियों की समस्या वासना से संबंधित है। सैक्स का तात्पर्य विस्तृत वासनाजन्य सुखों से है। इसमें काम वासना, स्पर्श, गंध, सुंदर दृश्यों को देखने की लालसा तथा भाँति-भाँति के सुस्वादु पदार्थों का उपयोग सम्मिलित है।

मानव अंततः एक जानवर ही है। अतः साधारण स्तर पर रहने वाले निम्न कोटि के व्यक्तियों को इंद्रिय-सुख चाहिए। हम अमुक स्त्री से विवाह करते, तो कैसा अच्छा रहता ? अमुक की पुत्री कितनी सुंदर है ? अमुक अभिनेत्री कैसा मुग्धकारी शृंगार करती है ? अमुक की पत्नी सामाजिक आचार-व्यवहार में कैसी निपुण है ?

इस प्रकार की अनेक छोटी छोटी-छोटी चिंताएँ साधारण मानवीय स्तर पर रहने वाले मनुष्यों के हृदय-सरोवर में उठा करती हैं। वे स्त्री को ललचाई दृष्टि से देखते हैं और हृदय में एक प्रकार की दलित वासना के उभरने का अनुभव करते हैं। इस प्रकार की चिंताओं से ग्रस्त व्यक्तियों से हमें दो बातें कहना है। वासना का सुख क्षणिक है। दूर से आकर्षक और समीप आने पर यह काला-कलूटा, परम निंद्य, अनेक अनर्थ तथा गुप्त रोगों की सृष्टि करने वाला राक्षस है।

वासनाजन्य चिंताओं से सावधान ! क्या तुम तरह-तरह के गुप्त रोगों से बचना चाहते हो ? क्या तुम समाज में उच्च गौरव-शाली प्रतिष्ठित पद, स्थिति प्राप्त करना चाहते हो ? क्या तुम अपने लिए भावी पीढ़ी के मन पर एक उज्ज्वल भाव छोड़ना चाहते हो ? यदि हाँ, तो वासना की चिंताओं को त्याग दो। प्रत्येक अभिनेत्री तुम्हारे सात्त्विक पवित्र आदर्श से नीची है, प्रत्येक पड़ौसी की पत्नी तुम्हारे लिए पूज्य है। तुमसे छोटी आयु की बालिकाएँ तुम्हारे पथ प्रदर्शन के लिए उत्सुक हैं। क्या आप उनका पथ प्रदर्शन न करेंगे ?

वासनाजन्य चिंताएँ आपकी निर्बलता की द्योतक हैं। आपको अपनी वासना के ऊपर विजय प्राप्त करना चाहिए। सिनेमा के गंदे फिल्मों को न देखिए, दूसरों की स्त्री की ओर वासनालोलुप दृष्टि न डालिए, गंदे चित्र, बुरे गाने, कुसंगति त्याग दीजिए, आप इन महा अनर्थकारी चिंताओं से मुक्त रहेंगे।

यदि आप वासना की तुच्छता को मन में गहरा उतार सकें, तो अपनी बहुत-सी शक्ति का क्षय रोक सकेंगे। रात्रि में शय्या ग्रहण करने से पूर्व मन को पवित्र संकल्पों में निरत रखना, कुसंगति से बचना, सद्ग्रंथों की प्रेरणा ग्रहण करना वासनामुक्ति का उपाय है।

आर्थिक चिंताएँ—

आर्थिक चिंताएँ आज के मानव की बड़ी कमजोरी है। हर एक व्यक्ति "अधिक रुपया चाहिए" चिल्ला रहा है। जिस किसी से पूछिए वही अपनी गरीबी प्रदर्शन करता है। यथेष्ट रुपया रखने वाला धनी मानी व्यक्ति भी आर्थिक चिंताओं में डूबे हैं।

आर्थिक चिंताओं की उत्पत्ति के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं—

(१) कृत्रिम आवश्यकताओं की अभिवृद्धि।

(२) अपने को दूसरों के समक्ष बढ़ा-चढ़ा कर प्रदर्शन करना।

(३) शौक की वस्तुओं-उत्तम वस्त्र, बढ़िया मकान, कीमती भोजन, मेवा, मिष्ठान, सैर-सपाटी का उपयोग।

(४) नशेबाजी या वेश्या गमन, गुप्त रोग, मुकदमेबाजी।

(५) समाज में दूसरों को अधिक देना-लेना विवाह-शादियों में अनाप-शनाप व्यय।

(६) अधिक संतान की उत्पत्ति तथा उनकी आवश्यकताएँ जुटाने में कठिनाइयाँ।

(७) दूसरों को प्रसन्न करने की चेष्टा में व्यय।

ऊपर के प्रत्येक कारण पर विचार कर देखिये कि आप आखिर क्यों चिंतित हो रहे हैं ? व्यर्थ का शौक या दिखावा छोड़ दीजिए। अपना वास्तविक रूप ही जनता के समक्ष आने दीजिए। क्या रखा है थोड़ी देर के उस आनंद में, जो सदा के लिए आपको ऋण के बोझ में बाँध दे। उस रात्रि सुख में क्या आनंद है, जो इतने बच्चे उत्पन्न कर दे कि आप उनकी शिक्षा, विवाह, नौकरी लगाने में ही मर मिटे ? व्यर्थ की आवश्यकताएँ वे जंजीरें हैं, जो आपको दूसरों के सामने हाथ फैलाने को विवश करती हैं। एक बीड़ी या दियासलाई की सींक के लिए आप दूसरों के सम्मुख हाथ पसारते नहीं लजाते ! कैसा दुर्भाग्य है कि चाट-पकौड़ी, सिनेमा, मिठाई या जुए के लिये आप दूसरे की खुशामद करते हैं।

गरीबी बुरी नहीं है। यदि आप गरीब हैं, तो वैसे ही समाज के सम्मुख रहिए। आपकी शिक्षा, उच्च संस्कार, व्यवहार, मुख की प्रसन्नता, सज्जनता का व्यवहार आपको समाज में उच्च पद प्रदान करेगा। सज्जन व्यक्ति गरीब होकर भी प्रतिष्ठा का अधिकारी होता है।

मितव्ययता एक कला है। इसमें पारंगत बनकर आप आर्थिक चिंताओं से मुक्त रह सकते हैं। आय को देखिए। उसी के अनुसार व्यय को कम या अधिक करते चलिए। जिस दिन आप कुछ नहीं कमाते, उस दिन भूखा रह लेना, कर्ज लेकर चिंतित रहने से श्रेयस्कर है।

सामाजिक चिंताएँ—

सामाजिक आचार-व्यवहार में नाना प्रकार की चिंताएँ आपको व्यग्र करती हैं। आप अपने अफसर को प्रसन्न करना चाहते हैं। डरते हैं कि कहीं वह नाखुश न हो जाय। यदि आप दुकानदार हैं, तो ग्राहकों के रुष्ट हो जाने से डरते हैं। यदि आप अध्यापक हैं, तो विद्यार्थियों से; वकील हैं, तो अपने मुअक्किलों से; उपदेशक हैं, तो श्रोताओं से डरते हैं। ये चिंताएँ तब दूर हो सकती हैं, जब आप मनोविज्ञान का अध्ययन कर मनुष्यों के गुप्त रहस्यों का ज्ञान

प्राप्त करें। स्त्री-पुरुष, ग्राहक, श्रोता, बच्चों, बूढ़ों, अफसरों के मन में रहने वाले 'अहं' को समझ लें। लोग तभी अपनों से क्रोधित होते हैं, जब आप उनके 'अहं' पर आघात करते रहते हैं। 'अहं' को उकसाने या उभारने से प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्न हो सकता है। आपके सामाजिक व्यवहार सरस-स्निग्ध हो सकते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति एक बंद पुस्तक के समान है। उसमें नाना अनुभूतियाँ, स्वाभाविक कमजोरियाँ, दलित वासनाएँ भरी पड़ी हैं। वह कुछ चीजों में दिलचस्पी लेता है, कुछ को नापसंद करता है। इन्हीं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन हमें इस प्रकार की चिंताओं से मुक्ति प्रदान कर सकता है।

मानसिक चिंताएँ—

इनका जन्म अति विचारशीलता से होता है। कुछ व्यक्ति इतने सुकुमार होते हैं कि तनिक भी मानसिक चोट को भी सहन नहीं कर पाते, टीका-टिप्पणी, मजाक, आलोचना या अपने विषय में अप्रिय बातें सुनकर आवेश में भर जाते हैं। कुछ निराशा का ताना-बाना दिन-रात बुना करते हैं। कहीं असफलता हो गई, उसी के लिए चिंतित रहा करते हैं। भविष्य में क्या होगा ? हमारी नौकरी रहेगी या छूट जायेगी ? बच्चों की शिक्षा कैसे चलेगी ? लड़कियों का विवाह कैसे होगा ? बाजार में महंगाई है, उदर पूर्ति कैसे चलेगी ?—इन चिंताओं में फँसे रहने वाले व्यक्ति को जानना चाहिए कि परमेश्वर के हाथ इतने बड़े हैं कि वह उन सभी कार्यों की पूर्ति के लिए उपयुक्त साधन निकाल लेंगे। हमें असफलता, निराशा, कमजोरी का अनुभव नहीं करना है, भविष्य उज्ज्वल है। हमारी शक्तियाँ भी तब तक इतनी बढ़ जायेगी कि हम सभी बढ़ने वाले उत्तरदायित्वों को पूर्ण कर सकेंगे। यदि हमारे ऊपर उत्तरदायित्व बढ़ते हैं तो हमारी शक्तियाँ, योग्यताएँ, संचित धनराशि, समाज के समान हमारे संबंध भी तो उत्तरोत्तर विकसित हो रहे हैं। हमारी मानसिक और बौद्धिक संपदाएँ भी तो निरंतर वृद्धि पर हैं। हमारे मित्र, सगे संबंधी भी हमारी सहायता के लिए

मौजूद हैं। अतः चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। फिक्र क्यों करें आने वाला समय हमारे लिए उज्ज्वल होगा। हमारे बाल-बच्चे बढ़कर उस स्थिति में पहुँच जायेंगे कि हमारा भार वहन कर सकें।

मन में चिंता रखना फूँस में अग्नि को छिपाए रखना जैसा मूर्खता पूर्ण प्रयत्न है। चिंता आपके स्वास्थ्य को दग्ध कर देगी। आयु का बहुत-सा हिस्सा जीने से नहीं, प्रत्युत चिंता की महा अनर्थकारी प्रलयंकारी दुर्वह कराल अग्नि से भस्मीभूत हो जायगा।

अपने विषय में अधिक चिंतन कर हम अपनी समस्याओं को हल नहीं कर पाते। उलटे कठिनाइयों से संघर्ष करने वाली गुप्त इच्छा शक्ति का ह्रास करते हैं। आने वाली कठिनाइयों के विषय में चिंता कर रही सही शक्तियों को भी क्षय करने की अपेक्षा यह युक्तिसंगत है कि उन पर स्थिर बुद्धि से शांतचित्त हो उनको दूर करने की तदबीरों पर विचार किया जाए।

चिंता न कीजिए, ठंडे दिल से प्रत्येक समस्या पर सोचिए, विचारिए। समस्या को हल करने की कोई युक्ति निकालिए। श्रम कीजिए। चिंता से क्या पायेंगे ? यदि आप स्वयं नहीं सोच सकते, तो मित्र से, पत्नी से, अध्यापक से या किसी विशेषज्ञ से सलाह लीजिए। दूसरों को अपनी समस्याएँ सुलझाने का अवसर प्रदान कीजिए।

कोई ऐसी विषम स्थिति नहीं कि उनको सुलझाया न जा सके। थोड़ी-सी विचारशीलता से कुछ न कुछ उपाय अवश्य निकल आयेगा जिससे परिस्थिति की रक्षा हो सके।

शारीरिक चिंताएँ—

शारीरिक चिंताओं में क्रमशः होती हुई कमजोरी तथा आने वाली वृद्धावस्था प्रमुख है। कुछ व्यक्ति अपनी शारीरिक निर्बलता को बढ़ा-चढ़ाकर देखने के आदी होते हैं। यह एक प्रकार का संदिग्ध स्वभाव है।

है, "नौकरी से रिटायर होकर पेंशन मिलने पर जब कोई चिंता न रहेगी, तो मजा करेंगे। और जब ५० वर्ष की आयु में शिथिल शरीर और टूटी हुई आशा लेकर पेंशन मिलती है, तो एक ऐसा आलस्य, शैथिल्य उसके मन और शरीर पर आकर अपना प्रभाव जमा लेता है कि वह कुछ नहीं कर पाता। अब उसे अनुभव होता है जैसे उसने कुछ बहुमूल्य वस्तु खो दी है। कुछ बहुमूल्य चीज, जिसे वह वापस नहीं ले सकता, उसके हाथ से निकल गई है। यह उसका जीवन है, जो उसके हाथ से निकल गया है। एक-एक दिन कर उसने प्रत्येक दिन का आनंद उल्लास भी नष्ट कर दिया तथा बाद में भी उसे कुछ हाथ न आया। इसी प्रकार कभी न प्राप्त होने वाली योजनाओं, मिथ्या कल्पनाओं, मोह में हम अपने वर्तमान की निर्मम हत्या करते चलते हैं। यदि प्रत्येक 'आज' का सम्मान करें, तो यह 'आज' हमें जीवन का सर्वोपरि आनंद प्रदान कर सकता है। जो कल संदिग्ध, अस्पष्ट धूमिल है। जिसका होना भी निश्चय नहीं है, जिसके मध्य में पर्याप्त समय है, उसके चिंतन में क्यों अपने वर्तमान को कटु बनाया जाए ?

आप अतीत की चिंताएँ, जिनका आपके जीवन से कोई संबंध नहीं है। त्याग दीजिए। उन्हें मरा हुआ समझिए। भविष्य के मिथ्या भय में मत लिप्त रहिए। आज को अच्छे से अच्छे रूप में व्यतीत कीजिए। पुरानी कटु अनुभूतियों की स्मृति मत लाइये। आज से ही जीवन का रस और आनंद लेना प्रारंभ कर दीजिए। किसी सुदूर भविष्य की आशा में आज को कटु न बनाइये।

परिणाम को ध्यान में रखिए

श्री विलिस कौरियर का चिंता से बचने की बड़ी मनोवैज्ञानिक रीति थी। वह तीन भागों में विभाजित की जा सकती है। वे पहले चिंतनीय परिस्थिति का सूक्ष्म विश्लेषण करते थे। "मैं किसलिए चिंतित हूँ ? क्या ये भय या आशंकाएँ सत्य हो सकती हैं ? अच्छा, यदि सत्य हो सकती है तो इनका अंतिम दुष्परिणाम क्या हो सकता है ? इससे मेरी मृत्यु नहीं हो सकती, कोई मुझे

फाँसी पर चढ़ा नहीं सकता तो फिर मैं यह मान लेता हूँ कि इसका सबसे बुरा परिणाम यह हो सकता है।"

यह मानकर कि अंतिम दुष्परिणाम यह हो सकता है, वे उसे अच्छा बनाने का प्रयत्न करते। अब इस विषम स्थिति में बात को संभालने के लिए मैं अधिक से अधिक क्या कर सकता हूँ ? यह सोचते। वे सोच-विचार कर उस स्थिति को अच्छा बना ही लेते थे। परिस्थिति के दमन में, हालत को अच्छा बनाने में उनकी संपूर्ण शक्तियाँ लग जाती थीं। चिंता करने के स्थान पर उन्हें मानसिक और शारीरिक प्रयत्न द्वारा स्थिति को सुधारने की ओर विशेष ध्यान रहता था।

इस गुर में सबसे अच्छी बात यह है कि यह चिंता के स्थान पर हमें कार्य करने की प्रेरणा देता है। जब हमने सबसे बुरे दुष्परिणाम को मानसिक जगत् में संभाल लिया, तो मानसिक तनाव दूर हो गया समझिए। चिंता के काले बादल दूर हुए, विचार का प्रकाश फैल गया। लाखों व्यक्ति चिंता तो किये जायेंगे। शरीर को सुखा डालेंगे, आत्महत्या की बात सोचेंगे, पर चिंता के कारणों का विश्लेषण कर उसे दूर करने का, उससे संघर्ष करने का प्रयत्न नहीं करते।

एक बार मान लीजिए कि नतीजा इस खराबी तक जा सकता है। अब जब यह दुष्परिणाम होना ही है, तो चिंता कर अपने मन और शरीर को शिथिल करने के स्थान पर प्रयत्न, सोच विचार, योजना निर्माण या मित्रों की सहायता से इस स्थिति को अच्छा बनावें, तभी लाभ है न ? जब आप शांति से मानसिक संतुलन स्थिति रखकर चिंता से मुक्त होने का मार्ग सोचेंगे, तो निश्चय जानिये, कोई मार्ग अवश्य निकल आयेगा।

जो व्यापारी वर्ग के व्यक्ति चिंता से मुक्ति के उपाय नहीं जानते, वे अल्पायु में मृत्यु के शिकार होते हैं। यही हाल गृह पत्नियों, मवेशी डॉक्टरों, सट्टे वाले, ठेकेदारों, जमींदार और किसानों का होता है, उन्हें भविष्य में क्या होगा ? हानि न हो जाय ? यदि हानि

हुई तो कैसे सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी ? लोग उँगली उठावेंगे इत्यादि मिथ्या भय लगे रहते हैं। मानसिक चिकित्सालयों में ७० प्रतिशत व्यक्तियों की चिंताओं का मूल कारण मिथ्या भय है। वे ऐसी बातों से डरते रहते हैं, जो कभी न होने वाली हैं।

भय चिंता उत्पन्न करता है। जो होना है, वह तो होगा ही। व्यर्थ भय भी क्यों किया जाए ? भय एक प्रकार का बंधन है। बंधन में रहना तो सबसे बुरी गुलामी है। डॉ० गौबर लिखते हैं, "चिंता से शारीरिक विकार उत्पन्न होते हैं। चिंता आपके शरीर में एक प्रकार का तनाव उत्पन्न करती है और मन में घबराहट की स्थिति रखती है। आपके पाचक-रस विकृत हो जाते हैं। कभी-कभी इससे पेट में घाव हो जाते हैं।" डॉ० हैराल्ट सी० हैबिन ने १७६ व्यापारियों के शरीरों की जाँच की और यह निष्कर्ष निकाला कि उनकी औसत आयु ४४·३ प्रतिशत होती है। इनमें से एक तिहाई मानसिक तनाव और असंतुलित मन के कारण हृदय रोग, पाचन क्रिया में विकार, पेट में घाव और हाई ब्लड प्रेशर के शिकार रहते हैं।

जो व्यापारी आंतरिक शक्ति को भंग नहीं होने देते, हानि-लाभ के बहाव को ऊपर से बह जाने देते हैं, वे स्नायु शिथिलता से मुक्त रहते हैं। रुपया एक बाह्य वस्तु है। हानि-लाभ चलेगा। इससे आंतरिक शांति भंग नहीं होनी चाहिए।

क्या एक शोरगुल से भरे हुए शहरी जीवन में आप मानसिक संतुलन स्थिर रख सकते हैं ? हमारा उत्तर है 'अवश्य'। झंझटों और नाना प्रकार के शोरगुल में भी आंतरिक शांति संभव है। यह एक मानसिक अभ्यास है। एक बार अभ्यास कर लेने के पश्चात् बाह्य हलचलों से वह भंग नहीं होती। हम प्रायः इस ओर प्रयत्न नहीं करते।

थोरो नामक विद्वान् ने लिखा है, "मनुष्य यह नहीं जानते कि उनमें वह शक्ति है, जिसके द्वारा वे अपने को परिस्थितियों के ऊपर रख सकते हैं। यदि हम अपने आदर्शों के अनुकूल जीवन की दिशा में बढ़ते रहें तथा आत्म विश्वास रखें तो हमें अप्रत्याशित सफलता लाभप्रद होगी।'

प्रत्येक व्यापारी को व्यापारी क्षेत्र में प्रविष्ट होने से पूर्व यह सौगंध ले लेनी चाहिए—"मैं चिंता नहीं करूँगा ! हानि होने पर चिल्लाऊँगा नहीं। यदि कोई कठिनाइयाँ भी आयेंगी, तो क्षेत्र छोड़कर भागूँगा नहीं, वरन् युद्ध करूँगा। मैं विजयी होने जा रहा हूँ। मुझे जीवन का आनंद लूटना है।"

अतः चिंता न करें। विषम परिस्थितियों से अपने को ऊँचा उठाने का प्रयत्न करें। चिंता में व्यर्थ ही हाथ-पाँव फूल जायेंगे और रही सही शक्ति भी विलुप्त हो जायेगी। चिंता जैसी पिशाचिनी को दूर ही रखना उचित है। उसके वश में हो निष्क्रिय हो जाने की अपेक्षा कार्य और योजना द्वारा उसे दबा देना वीर पुरुषों का कार्य है।

चिंता का विश्लेषण किया जाए

किप्लिंग की एक कविता है, जिसका मूल आशय है, 'मेरे चार सेवक हैं। उन्होंने मुझे वह सब कुछ सिखाया है, जो मैं आज जानता हूँ। उनके नाम हैं—'क्या' ? क्यों ? कब ? कैसे ? कहाँ ? कौन ? किप्लिंग का तात्पर्य यह है कि मनुष्य का संपूर्ण ज्ञान इन्हीं के द्वारा बढ़ता और परिपक्व होता है।

जब कभी चिंता आपको परेशान करे, तो तुरंत मनः-विश्लेषण द्वारा उसके कारणों की खोज कीजिए। (१) मालूम कीजिए कि वास्तविक बात क्या है ? (२) इन तथ्यों को पृथक्-पृथक् रख लीजिए (३) किसी निश्चय पर शीघ्र ही आ जाइये (४) उस निश्चय पर तुरंत कार्य करना प्रारंभ कर दीजिये।

आप कहेंगे, यह भी कोई बात हुई। किन्तु स्मरण रखिए, अरस्तू जैसा दार्शनिक इसी कार्य प्रणाली पर काम किया करता था। उसी ने संसार को इस योजना की शिक्षा प्रदान की है।

प्रथम नियम—तथ्यों को ठीक-ठीक मालूम कीजिए। जब तक आप बात को पूरी तरह नहीं समझते, उससे मुक्ति की बात कैसे सोच सकते हैं ? पूरी-पूरी जानकारी वह चीज है, जहाँ से

चिंता दूर करने का काम प्रारंभ होता है। तथ्यों की गड़बड़, सब कुछ मिला-जुला अंधकारपूर्ण रहने से एक मिथ्या भय मन में उदित हो जाता है, जिसमें हमें कुछ भी स्पष्ट नजर नहीं आता। हम ऐसी-ऐसी विषम बातें सोचते हैं, ऐसी-ऐसी कल्पनाओं से भयभीत होते हैं, जो मूल समस्या से किसी प्रकार भी संबंधित नहीं होती। अपनी समस्याओं को विचार और तर्क द्वारा पृथक्-पृथक् कर डालने से हटकर हम मन ही मन एक गुप्त मिथ्या भय से परेशान रहते हैं। यह अंधकार मिथ्या भय का फल है। जो व्यक्ति अपनी चिंता का विश्लेषण कर लेता है, उसकी चिंता उसी प्रकार उड़ जाती है जैसे उबलता हुआ बर्तन खोलने से भाप उड़ जाती है। जैसे एक वकील अपने मुकदमे के लिए तथ्यों की तलाश करता है, वैसे ही निष्पक्ष होकर आप भी अपने व्यक्तित्व की समस्याओं को परखें!

"मैं किसलिए चिंता कर रहा हूँ ? मैं उसके लिए क्या कर सकता हूँ ? मैं इनसे कैसे बचूँ ?" इन प्रश्नों के उत्तर कागज पर लिख डालिए। कितने ही व्यक्ति किसी निश्चय पर नहीं आ पाते। 'यह करूँ या वह करूँ ?' इसी शशोपंज में रह जाते हैं। यह स्थिति चिंता उत्पन्न करने वाली है। यदि जल्दी निश्चय कर लिया जाए, तो आसानी से चिंता से बचा जा सकता है। संसार में चिंता का कारण यह है कि लोग बिना मूल कारणों का विश्लेषण किए बिना ही अंधकार की स्थिति में निर्णय करने का प्रयत्न करते हैं। उनके निर्णय के आधार प्रायः कच्चे होते हैं।

चिंताएँ नाना रूपों तथा विषयों की होती हैं। मुख्य रूप से हम इन्हें निम्न विभागों में बाँटते हैं—(१) शारीरिक चिंताएँ, (२) सांसारिक चिंताएँ और (३) धार्मिक चिंताएँ। स्थूल रूप में यह कहा जा सकता है कि सांसारिक चिंताएँ सबसे अधिक लोगों को सताती हैं। उन्हीं से शारीरिक तथा धार्मिक चिंताओं की उत्पत्ति होती है, अतः सर्व प्रथम उन्हीं पर विचार करें।

सांसारिक चिंताएँ—

इस वर्ग में अनेक छोटी-छोटी बातें सम्मिलित हैं। सर्वप्रथम आर्थिक चिंताएँ हैं। आज के जीवन में दो तत्त्व मुख्य रूप से महत्त्वपूर्ण बन गये हैं—रुपया तथा वासना। अधिकांश व्यक्तियों की समस्या वासना से संबंधित है। सैक्स का तात्पर्य विस्तृत वासनाजन्य सुखों से है। इसमें काम वासना, स्पर्श, गंध, सुंदर दृश्यों को देखने की लालसा तथा भाँति-भाँति के सुस्वादु पदार्थों का उपयोग सम्मिलित है।

मानव अंतत: एक जानवर ही है। अत: साधारण स्तर पर रहने वाले निम्न कोटि के व्यक्तियों को इंद्रिय-सुख चाहिए। हम अमुक स्त्री से विवाह करते, तो कैसा अच्छा रहता ? अमुक की पुत्री कितनी सुंदर है ? अमुक अभिनेत्री कैसा मुग्धकारी शृंगार करती है ? अमुक की पत्नी सामाजिक आचार-व्यवहार में कैसी निपुण है ?

इस प्रकार की अनेक छोटी छोटी-छोटी चिंताएँ साधारण मानवीय स्तर पर रहने वाले मनुष्यों के हृदय-सरोवर में उठा करती हैं। वे स्त्री को ललचाई दृष्टि से देखते हैं और हृदय में एक प्रकार की दलित वासना के उभरने का अनुभव करते हैं। इस प्रकार की चिंताओं से ग्रस्त व्यक्तियों से हमें दो बातें कहना है। वासना का सुख क्षणिक है। दूर से आकर्षक और समीप आने पर यह काला-कलूटा, परम निंद्य, अनेक अनर्थ तथा गुप्त रोगों की सृष्टि करने वाला राक्षस है।

वासनाजन्य चिंताओं से सावधान ! क्या तुम तरह-तरह के गुप्त रोगों से बचना चाहते हो ? क्या तुम समाज में उच्च गौरव-शाली प्रतिष्ठित पद, स्थिति प्राप्त करना चाहते हो ? क्या तुम अपने लिए भावी पीढ़ी के मन पर एक उज्ज्वल भाव छोड़ना चाहते हो ? यदि हाँ, तो वासना की चिंताओं को त्याग दो। प्रत्येक अभिनेत्री तुम्हारे सात्त्विक पवित्र आदर्श से नीची है, प्रत्येक पड़ौसी की पत्नी तुम्हारे लिए पूज्य है। तुमसे छोटी आयु की बालिकाएँ तुम्हारे पथ प्रदर्शन के लिए उत्सुक हैं। क्या आप उनका पथ प्रदर्शन न करेंगे ?

वासनाजन्य चिंताएँ आपकी निर्बलता की द्योतक हैं। आपको अपनी वासना के ऊपर विजय प्राप्त करना चाहिए। सिनेमा के गंदे फिल्मों को न देखिए, दूसरों की स्त्री की ओर वासनालोलुप दृष्टि न डालिए, गंदे चित्र, बुरे गाने, कुसंगति त्याग दीजिए, आप इन महा अनर्थकारी चिंताओं से मुक्त रहेंगे।

यदि आप वासना की तुच्छता को मन में गहरा उतार सकें, तो अपनी बहुत-सी शक्ति का क्षय रोक सकेंगे। रात्रि में शय्या ग्रहण करने से पूर्व मन को पवित्र संकल्पों में निरत रखना, कुसंगति से बचना, सद्ग्रंथों की प्रेरणा ग्रहण करना वासनामुक्ति का उपाय है।

आर्थिक चिंताएँ—

आर्थिक चिंताएँ आज के मानव की बड़ी कमजोरी है। हर एक व्यक्ति "अधिक रुपया चाहिए" चिल्ला रहा है। जिस किसी से पूछिए वही अपनी गरीबी प्रदर्शन करता है। यथेष्ट रुपया रखने वाला धनी मानी व्यक्ति भी आर्थिक चिंताओं में डूबे हैं।

आर्थिक चिंताओं की उत्पत्ति के प्रमुख कारण इस प्रकार हैं—

(१) कृत्रिम आवश्यकताओं की अभिवृद्धि।

(२) अपने को दूसरों के समक्ष बढ़ा-चढ़ा कर प्रदर्शन करना।

(३) शौक की वस्तुओं-उत्तम वस्त्र, बढ़िया मकान, कीमती भोजन, मेवा, मिष्ठान, सैर-सपाटी का उपयोग।

(४) नशेबाजी या वेश्या गमन, गुप्त रोग, मुकदमेबाजी।

(५) समाज में दूसरों को अधिक देना-लेना विवाह-शादियों में अनाप-शनाप व्यय।

(६) अधिक संतान की उत्पत्ति तथा उनकी आवश्यकताएँ जुटाने में कठिनाइयाँ।

(७) दूसरों को प्रसन्न करने की चेष्टा में व्यय।

ऊपर के प्रत्येक कारण पर विचार कर देखिये कि आप आखिर क्यों चिंतित हो रहे हैं ? व्यर्थ का शौक या दिखावा छोड़ दीजिए। अपना वास्तविक रूप ही जनता के समक्ष आने दीजिए। क्या रखा है थोड़ी देर के उस आनंद में, जो सदा के लिए आपको ऋण के बोझ में बाँध दे। उस रात्रि सुख में क्या आनंद है, जो इतने बच्चे उत्पन्न कर दे कि आप उनकी शिक्षा, विवाह, नौकरी लगाने में ही मर मिटे ? व्यर्थ की आवश्यकताएँ वे जंजीरें हैं, जो आपको दूसरों के सामने हाथ फैलाने को विवश करती हैं। एक बीड़ी या दियासलाई की सींक के लिए आप दूसरों के सम्मुख हाथ पसारते नहीं लजाते ! कैसा दुर्भाग्य है कि चाट-पकौड़ी, सिनेमा, मिठाई या जुए के लिये आप दूसरे की खुशामद करते हैं।

गरीबी बुरी नहीं है। यदि आप गरीब हैं, तो वैसे ही समाज के सम्मुख रहिए। आपकी शिक्षा, उच्च संस्कार, व्यवहार, मुख की प्रसन्नता, सज्जनता का व्यवहार आपको समाज में उच्च पद प्रदान करेगा। सज्जन व्यक्ति गरीब होकर भी प्रतिष्ठा का अधिकारी होता है।

मितव्ययता एक कला है। इसमें पारंगत बनकर आप आर्थिक चिंताओं से मुक्त रह सकते हैं। आय को देखिए। उसी के अनुसार व्यय को कम या अधिक करते चलिए। जिस दिन आप कुछ नहीं कमाते, उस दिन भूखा रह लेना, कर्ज लेकर चिंतित रहने से श्रेयस्कर है।

सामाजिक चिंताएँ—

सामाजिक आचार-व्यवहार में नाना प्रकार की चिंताएँ आपको व्यग्र करती हैं। आप अपने अफसर को प्रसन्न करना चाहते हैं। डरते हैं कि कहीं वह नाखुश न हो जाय। यदि आप दुकानदार हैं, तो ग्राहकों के रुष्ट हो जाने से डरते हैं। यदि आप अध्यापक हैं, तो विद्यार्थियों से; वकील हैं, तो अपने मुअक्किलों से; उपदेशक हैं, तो श्रोताओं से डरते हैं। ये चिंताएँ तब दूर हो सकती हैं, जब आप मनोविज्ञान का अध्ययन कर मनुष्यों के गुप्त रहस्यों का ज्ञान

प्राप्त करें। स्त्री-पुरुष, ग्राहक, श्रोता, बच्चों, बूढ़ों, अफसरों के मन में रहने वाले 'अहं' को समझ लें। लोग तभी अपनों से क्रोधित होते हैं, जब आप उनके 'अहं' पर आघात करते रहते हैं। 'अहं' को उकसाने या उभारने से प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्न हो सकता है। आपके सामाजिक व्यवहार सरस-स्निग्ध हो सकते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति एक बंद पुस्तक के समान है। उसमें नाना अनुभूतियाँ, स्वाभाविक कमजोरियाँ, दलित वासनाएँ भरी पड़ी हैं। वह कुछ चीजों में दिलचस्पी लेता है, कुछ को नापसंद करता है। इन्हीं का मनोवैज्ञानिक अध्ययन हमें इस प्रकार की चिंताओं से मुक्ति प्रदान कर सकता है।

मानसिक चिंताएँ—

इनका जन्म अति विचारशीलता से होता है। कुछ व्यक्ति इतने सुकुमार होते हैं कि तनिक भी मानसिक चोट को भी सहन नहीं कर पाते, टीका-टिप्पणी, मजाक, आलोचना या अपने विषय में अप्रिय बातें सुनकर आवेश में भर जाते हैं। कुछ निराशा का ताना-बाना दिन-रात बुना करते हैं। कहीं असफलता हो गई, उसी के लिए चिंतित रहा करते हैं। भविष्य में क्या होगा ? हमारी नौकरी रहेगी या छूट जायेगी ? बच्चों की शिक्षा कैसे चलेगी ? लड़कियों का विवाह कैसे होगा ? बाजार में महंगाई है, उदर पूर्ति कैसे चलेगी ?—इन चिंताओं में फँसे रहने वाले व्यक्ति को जानना चाहिए कि परमेश्वर के हाथ इतने बड़े हैं कि वह उन सभी कार्यों की पूर्ति के लिए उपयुक्त साधन निकाल लेंगे। हमें असफलता, निराशा, कमजोरी का अनुभव नहीं करना है, भविष्य उज्ज्वल है। हमारी शक्तियाँ भी तब तक इतनी बढ़ जायेगी कि हम सभी बढ़ने वाले उत्तरदायित्वों को पूर्ण कर सकेंगे। यदि हमारे ऊपर उत्तरदायित्व बढ़ते हैं तो हमारी शक्तियाँ, योग्यताएँ, संचित धनराशि, समाज के समान हमारे संबंध भी तो उत्तरोत्तर विकसित हो रहे हैं। हमारी मानसिक और बौद्धिक संपदाएँ भी तो निरंतर वृद्धि पर हैं। हमारे मित्र, सगे संबंधी भी हमारी सहायता के लिए

मौजूद हैं। अतः चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। फिक्र क्यों करें आने वाला समय हमारे लिए उज्ज्वल होगा। हमारे बाल-बच्चे बढ़कर उस स्थिति में पहुँच जायेंगे कि हमारा भार वहन कर सकें।

मन में चिंता रखना फूँस में अग्नि को छिपाए रखना जैसा मूर्खता पूर्ण प्रयत्न है। चिंता आपके स्वास्थ्य को दग्ध कर देगी। आयु का बहुत-सा हिस्सा जीने से नहीं, प्रत्युत चिंता की महा अनर्थकारी प्रलयंकारी दुर्वह कराल अग्नि से भस्मीभूत हो जायगा।

अपने विषय में अधिक चिंतन कर हम अपनी समस्याओं को हल नहीं कर पाते। उलटे कठिनाइयों से संघर्ष करने वाली गुप्त इच्छा शक्ति का ह्रास करते हैं। आने वाली कठिनाइयों के विषय में चिंता कर रही सही शक्तियों को भी क्षय करने की अपेक्षा यह युक्तिसंगत है कि उन पर स्थिर बुद्धि से शांतचित्त हो उनको दूर करने की तदवीरों पर विचार किया जाए।

चिंता न कीजिए, ठंडे दिल से प्रत्येक समस्या पर सोचिए, विचारिए। समस्या को हल करने की कोई युक्ति निकालिए। श्रम कीजिए। चिंता से क्या पायेंगे ? यदि आप स्वयं नहीं सोच सकते, तो मित्र से, पत्नी से, अध्यापक से या किसी विशेषज्ञ से सलाह लीजिए। दूसरों को अपनी समस्याएँ सुलझाने का अवसर प्रदान कीजिए।

कोई ऐसी विषम स्थिति नहीं कि उनको सुलझाया न जा सके। थोड़ी-सी विचारशीलता से कुछ न कुछ उपाय अवश्य निकल आयेगा जिससे परिस्थिति की रक्षा हो सके।

शारीरिक चिंताएँ—

शारीरिक चिंताओं में क्रमशः होती हुई कमजोरी तथा आने वाली वृद्धावस्था प्रमुख है। कुछ व्यक्ति अपनी शारीरिक निर्बलता को बढ़ा-चढ़ाकर देखने के आदी होते हैं। यह एक प्रकार का संदिग्ध स्वभाव है।

साधारण व्यायाम, संयमित जीवन, जिह्वा पर कंट्रोल तथा आहर-विहार में सावधान रहने से अनेक शारीरिक चिंताएँ दूर हो सकती हैं। शक-सुबे की आदत अनर्थकारी है। आपका जीवन सौ वर्ष तक मजबूती से चलने के लिए बनाया गया है। उस पर अत्याचार न करें, तो वह मजे में अपने आप चलता जायेगा। मिथ्या भय त्याग दीजिए। साधारण बीमारियों से युद्ध करने की प्रचुर सामर्थ्य आपमें विद्यमान हैं। व्यर्थ के भय से शरीर दुर्बल होता है।

चिंता की सृष्टि करने वाले आप स्वयं ही हैं। यह आपके विचार की आदत मात्र है। बाह्य वातावरण को बदला नहीं जा सकता।

यदि शरीर की चिंता है, तो कुछ क्रियात्मक कार्य कीजिए, टहलिये, कसरत कीजिए। शुद्ध वायु में रहा कीजिए या विश्राम लीजिए पर व्यर्थ फिक्र से तो कुछ होना नहीं है। योजना बनाकर चिंता के कारण को दूर करना ही इससे मुक्ति का उपाय है।

धार्मिक चिंताएँ—

ईश्वर क्या है ? आत्मा तथा ईश्वर का क्या संबंध है ? मृत्यु के पश्चात् क्या होता है ?—ये प्रश्न बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। इनसे मन में सद्प्रकाश का उदय होता है। लेकिन यदि आप इनके ठीक उत्तर नहीं जानते या कोई आपको संतुष्ट नहीं कर पाता, तो कोई चिंता न करें। ज्यों-ज्यों आपका ज्ञान बढ़ेगा, आप स्वयं इनकी उपयोगिता तथा अर्थ समझते चलेंगे। धर्म अनुभव की वस्तु है। प्रतिदिन हम धार्मिक समस्याओं के विषय में कुछ न कुछ ग्रहण करते हैं। अतः समय से पूर्व इन चिंताओं से भी परेशान नहीं होना चाहिए। यदि हम अपने अनुभव से लाभ उठावें तो प्रायः सभी प्रकार की चिंताओं से मुक्त हो सकते हैं।

व्यस्त रहा कीजिए—

विन्स्टन चर्चिल दिन-रात के चौबीस घंटों में १८ घंटे परिश्रम करने के आदी रहे हैं। उनसे जब पूछा गया कि क्या चिंता ने

कभी उन पर आक्रमण किया है, तो उन्होंने उत्तर दिया—"मेरे पास इतना काम है कि चिंता करने के लिए समय ही नहीं मिल पाता।" चिंता फालतू, आलसी, निष्क्रिय मन का एक विकार है। कमजोर तबियत के व्यक्ति जब खाली होते हैं, तो बजाय उन्नत पहलू देखने के वे अपने विरोध, भय, दुःख, क्लेश की बातें सोचा करते हैं। जिनके पास पर्याप्त कार्य है, उन्हें चिंता जैसे विलास के लिए कहाँ अवकाश है ?

प्रसिद्ध वैज्ञानिक लुई पाश्चर ने कहा है कि शांति दो ही स्थानों पर रह सकती है, पुस्तकालय में अथवा वैज्ञानिक प्रयोगशाला में। इन दोनों स्थानों में क्यों शांति की कल्पना की गई है ? कारण इन दोनों स्थानों में कार्य करने वाले व्यक्ति अपनी पुस्तकों तथा अनुसंधानों में इतने निमग्न रहते हैं कि उनके पास चिंता करने के लिए अवकाश ही नहीं रहता। अनुसंधान में रत व्यक्तियों को स्नायाविक दौरे नहीं पड़ते। चिंता जैसी व्यर्थ सारहीन चीज के लिए उनके पास समय नहीं बचता।

यह बात मनोविज्ञान की दृष्टि से ठीक नहीं है। चाहे किसी का मस्तिष्क कितना ही तेज, बुद्धि कुशाग्र क्यों न हो, दिमाग एक समय में एक ही बात पर केंद्रित हो सकता है। जब आप अपने कार्य में सुई की तरह गढ़ जाते हैं, फिर मन की शक्तियों को चिंता के विषयों पर सोचने-विचारने का अवसर प्राप्त नहीं होता। काम में तन्मय हो जाना, रुचि और उत्साह से उसे पूर्ण करने का प्रयत्न करना चिंता से बचने का श्रेष्ठ उपाय है।

जौन कूपर पौव्स अपनी पुस्तक "अप्रिय को कैसे भूलें ?" में लिखते हैं—"जब मनुष्य का मन किसी रुचिनुकूल कार्य में तन्मयता से लग जाता है, तो उसे एक प्रकार की आराम देने वाली संरक्षण, एक आंतरिक शांति, एक आनंददायक विस्मृति का अनुभव होता है। उसके चिंता वाले तनाव का भी बंधन टूट जाता है।"

ओसा जौनसन कहा करते थे—"मुझे संसार की इस कर्मस्थली में, कार्य में निमग्न हो जाना चाहिए, अन्यथा मैं निराशा तथा चिंता में घुल जाऊँगा।"

बात ठीक भी है। यदि हम आप किसी कार्य में अपनी संपूर्ण शक्तियों को व्यस्त न रखें, यदि हम बैठकर गड़े मुर्दे उखाड़ने लगें; दु:खद प्रसंगों का स्मरण कर रोते रहें, तो हमारा जीना ही दुष्कर हो जाएगा।

बर्नार्डशा ने सही कहा है—"दु:खी रहने का सीधा मार्ग यह है कि आप इस चिंता में पड़ जाय कि मैं प्रसन्न हूँ या दु:खी ?" अत: अहितकर चिंतन के लिए मन को ढीला छोड़ देना ही मूर्खता है। आइए, फालतू बैठने के स्थान पर किसी कार्य में व्यस्त रहा जाय—अपना कमरा ही साफ कर लें, रूमाल ही धो डालें, बाहर से सब्जी ले आयें या अपने जूते पर पालिश ही कर लें। कार्य चाहिए। जहाँ आप किसी कार्य में लिप्त हुए कि चिंता भागी। यह सबसे सस्ती दवाई है, जिससे चिंता की पुरानी शत्रुता है। चिंता से बचने के लिए कार्य, पढ़ाई-लिखाई, घरेलू काम, बच्चों से खेल-कूद, गायन या बागवानी से लगे रहें।

छोटी-छोटी बातों के लिए चिंतित न रहें—

कुछ व्यक्तियों की यह आदत होती है कि वे आने वाले भविष्य को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर तिल का ताड़ बनाकर देखते हैं। २४ शताब्दी पूर्व पेरेक्लीज ने कहा था—"सज्जनों ! हमारी बड़ी मानसिक कमजोरी यह है कि हम बैठकर छोटी-छोटी सी बातों की चिंता में समय नष्ट कर देते हैं।" वास्तव में यदि हम अपनी चिंताओं को उनके ठीक रूप में देखें, तो हमें विदित होगा कि दरअसल ये छोटी-छोटी चीजें हैं, जो हमें परेशान करती रहती हैं।

डिजराइली ने कहा—"जीवन ऐसी छोटी-छोटी बातों के लिए चिंतित रहने के लिए नहीं है। जीवन महान् है। यह साधारण बातों में विनष्ट होने के लिए कदापि नहीं बना है।" ऐंड्रे मौरिस में उक्त शब्दों के महत्त्व का निर्देश करते हुए कहा कि इन शब्दों ने मुझे

जीवन के अनेक कारुणिक और चिंतनीय स्थलों में सहायता की है। अनेक बार हम गहराई से न सोचने के कारण या दूरदृष्टि के अभाव में ऐसी बातों की चिंता में फँस जाते हैं, जिन्हें हम भूलना चाहते हैं और जिनसे हम घृणा करते हैं। हम इस संसार में तीस-चालीस वर्ष और मजे लूटेंगे। हमारी ये छोटी-छोटी क्षुद्र चिंताएँ काल के प्रवाह में स्वयं विलुप्त हो जायेंगी। हम क्यों जीवन के बहुमूलय क्षण छोटे-छोटे चिंता उत्पन्न करने वाले कार्यों की बातें सोच-सोचकर क्यों बर्बाद करें ? समय स्वयं इन्हें अपने अंदर आत्मसात् कर लेगी। अधिक ऊँचे प्रश्न, उच्च स्तर की जीवन संबंधी समस्याओं में हमें संलग्न रहना उचित है।

कल्पित भय व्यर्थ है

क्या अनेक अनहोनी घटनाओं, अजीब प्रकार से होने वाले फल, कष्टदायक चीजों की बाबत सोचकर चिंतित रहा जा सकता है। बिजली मेरे ऊपर न गिर जाए ? मैं नदी या तालाब में न डूब जाऊँ ? मुझे सिंह न खा डाले ? यदि मुझे अकेले छोड़कर पिताजी चले जाय, तो क्या हो ? कहीं मैं मर न जाऊँ ?—ये सब कल्पित भय निरंतर बच्चे के मनःक्षेत्र में उदित होते रहते हैं। बच्चे इन मिथ्या भयों में अज्ञान वश फँसे रहते हैं।

ऐसे ही अनेक मनुष्यों के मिथ्या भय और चिंताएँ होती हैं उनके भय, निराशा, शंका, चिंता आदि कल्पित बंधनों पर आधारित होती हैं। वे इन थोथे बंधनों में बँधे रहते हैं। अपने आने वाले लाभों और उन्नति के स्थान पर ये लोग मन की व्यथा, पीड़ा, रोग, कष्ट, भय आदि के बाबत सोचा करते हैं। निन्यानवे प्रतिशत भय ऐसे हैं, जो आगे आते ही नही। यदि हम अपने इन कल्पित शत्रुओं को पराजित कर दें, तो सुव्यवस्थित जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

ईश्वर की इस सर्वांगपूर्ण सुंदर सृष्टि में आसानी से नष्ट होने वाली कोई चीज नहीं है। वह पूर्णता से भरी है। जनरल जार्ज क्रुक लिखते हैं—"मेरा सब दुःख, चिंताएँ वास्तविक स्थिति से

उत्पन्न न होकर कल्पित भयों से उत्पन्न हुए।" इसीलिए शेक्सपीयर ने कहा कि कायर आदमी मौत से पहले कई बार मर चुके होते हैं—इसी ख्याल से कि मौत अब आई अब आई और बहादुर आदमी तो एक बार ही मरता है, जबकि साक्षात् मृत्यु उसे घेर लेती रहती है।

यदि वास्तव में आपको किसी बात की चिंता है, तो औसतन उनमें से अनेक बातें कभी न घटेंगी, केवल मन में उनका भार मात्र बना रहेगा। संभव है, वह बातें औसत के नियमों के अनुसार न आयें, जिनसे आप व्यर्थ ही मन ही मन दुःखी हो रहे हैं।

अनिवारणीय से संतुष्ट रहने का प्रयत्न कीजिए—

जो होना है, वह होकर रहेगा। यदि भवितव्यता निश्चय है, यदि आने वाली दुर्घटना दुःख भरे अवसर आने ही वाले हैं, उनसे नहीं बचा जा सकता, तो उनसे मेल कर लेना ही ठीक है। मेल करने से तात्पर्य यह है कि आप अपने आपको उसी स्थिति में समझ लीजिए। जिन बातों को आप अपनी संपूर्ण शक्तियों के बावजूद बदल नहीं सकते और जो आपके हाथ की बात नहीं है, उनके विषय में चिंतित होने से क्या लाभ ? चिंतित होकर तो जो रहा सहा है, उसका भी आनंद न आयेगा।

ईसा महान् का नैतिक साहस इतिहास के पन्नों पर स्वर्ण अक्षरों से लिखा रहेगा। मानवता ने उनके साथ जो व्यवहार किया वह पाशविक था, किंतु उन्होंने बड़ी मनःशांति से उसे सहन किया। सुकरात के सामने मृत्यु दंड के फलस्वरूप जब विष का प्याला लाया गया। जेलर ने विष का प्याला उसे पीने के लिए देते हुए कहा, "जो कुछ होने वाला है, उसे निश्चिंत होकर वहन करो।" सुकरात ने निश्चिंतता से प्याला पी लिया और शांति से निर्भयता-पूर्वक मृत्यु प्राप्त की। वह जिसे बदल न सका, उसे शांति से सहन किया।

जो होना है, उसे होने दीजिए। प्रयत्नों द्वारा स्थिति को सुधारने का प्रयत्न कीजिए। चिंता करने से कोई लाभ नहीं। चिंता

दूर करने के लिए ईसाइयों में प्रचलित इस प्रार्थना के मर्म को समझिए—

"हे परमेश्वर हमें मनः शांति दीजिए। जिन घटनाओं पर हमारा वश नहीं, उन्हें सहन करने की शक्ति दीजिए। जिन बातों को हम बदल सकते हैं, उन्हें बदलने का साहस दीजिए।"

जो घटनाएँ हो चुकी हैं, जो वर्ष दिन या घंटे हमारे हाथ से छूटे हुए तीर की भाँति अब हमारे वश की बात नहीं रहे हैं, उन पर हमारा क्या अधिकार हो सकता है ? हम उन्हें किस प्रकार वापस ला सकते हैं ? किसी भी प्रकार नहीं। यह मुमकिन नहीं कि उन दिनों को हम दुबारा जी सकें, जो हम एक बार जी चुके हैं। जो घटनाएँ व्यतीत हो चुकी हैं, हम उन्हें दूर नहीं कर सकते। हाँ, उनके प्रभावों को थोड़ा बहुत सुधार अवश्य सकते हैं।

परमेश्वर की आनंदमयी सृष्टि में पुराने अनुभवों से केवल एक ही लाभ संभव है। पुराने अनुभवों का विश्लेषण कर हम अपनी वे गलतियाँ मालूम कर सकते हैं, जिनके कारण हमें हानि उठानी पड़ी है। इन गलतियों से लाभ उठाकर उन्हें विस्मृति के गर्भ में विलीन कर देने में ही श्रेष्ठता है।

भूलना सीखिए—

जब मन में पुरानी दुःखद स्मृतियाँ सजग हों, तो उन्हें भुला देने में ही श्रेष्ठता है। अप्रिय बात को भुलाना आवश्यक है। भुलाना उतना ही जरूरी है, जितना अच्छी बात का स्मरण करना। जब खेत में घास-फूँस उग आती है, तो आप उसे उखाड़ फेंकते हैं। घृणित, क्रोधी, ईर्ष्यालु, व्यथाजनक स्मृतियाँ उन्हीं कंटकों की तरह हैं, जो अंतःकरण रूपी उद्यान की पवित्रता को नष्ट करती हैं। उत्पादक शक्ति का क्षय कर देती हैं। हम घृणित चिंताजनक अनुभूतियों को पुनः-पुनः याद कर अपने चहुँ ओर एक मानसिक नर्क निर्मित कर उसी में दुःखी पीड़ित होते रहते हैं।

बुद्धिमानी इसी में है कि इन दुःखद प्रसंगों की ओर से मन हटा लिया जाए। जब हम उस ओर से मनःवृत्ति हटा लेंगे, तो

निश्चय ही हमारा इस नर्क से हाथ छूट जायेगा। विस्मृति का प्रभाव बड़ा मंगलदायक है। ज्यों ही हम पीड़ा, दुःख और वेदना की स्मृतियों या कल्पित भयों से अपना संबंध तोड़ते हैं, त्योंही हम अंधकार से प्रकाश की ओर चलना प्रारंभ कर देते हैं। जब तक मनुष्य का मन व्यथा, पीड़ा, रोग, कष्ट, भय आदि से परिपूर्ण रहता है, तब तक उसका पौरुष प्रकट नहीं होता है। उनकी दैवी कल्याणकारी शक्ति पंगु बनी रहती है।

पं० रामलाल पहाड़ा का मत माननीय है, "जब-जब आपके मन में अनिष्ट भाव प्रकट हों, तब-तब उनको हटाना और भुलाना ही बुद्धिमानी का कार्य है। दुर्बलता, दीन-हीनता, भय और कष्ट को भुलाना कठिन है परंतु ईश्वर का स्मरण सरल है ... यदि हम कल्पित-बंधनों को तोड़ डालें, तो ईश्वर सहायता देगा। उसके प्रति मन फेरते ही वह अद्भुत एवं अदृश्य रीति से सहायता करता है। हमें इसका कुछ ज्ञान भी नहीं होने पाता।"

अमेरिका के एक प्रमुख डॉक्टर 'मेडिकल टाक' नामक पत्र में लिखते हैं कि 'वर्षों के अनुभव के बाद मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि दुःख और चिंता दूर करने के लिए 'भूल जाओ' से बढ़कर कोई दवा नहीं है।" अपने लेख में वे लिखते हैं—

"यदि तुम शरीर से, मन से और आचरण से स्वस्थ होना चाहते हो *अस्वस्थता की सारी बातें भूल जाओ।*

नित्य प्रति के जीवन में छोटी-मोटी चिंताओं को लेकर झींकते मत रहो। उन्हें भूल जाओ। उन्हें पोसो मत। अपने अव्यक्त या अंतस्थल में पालकर मत रखो। उन्हें अंदर से निकाल फेंको और भुला जाओ। उन्हें स्मृति से मिटा दो।

माना कि किसी 'अपने' ने ही तुम्हें चोट पहुँचाई है। तुम्हारा दिल दुखाया है। संभव है जान बूझकर उसने ऐसा नहीं किया है और मान लो कि जान बूझ कर ही उसने ऐसा किया है, तो क्या तुम उसे लेकर मानसिक उधेड़ बुन में लगे रहोगे ? इस चिंतित मन की अवस्था से क्या तुम्हारे मन का बोझ हल्का होगा ? अरे

भाई, उन कष्टदायक अप्रिय प्रसंगों को भुला दो। उधर ध्यान न देकर अच्छे शुभ कार्यों में मन को केंद्रीभूत कर दो। पुरानी कटु स्मृतियों को लेकर चिंताओं का जाल मत बुनने लगो। अपनी पीड़ाओं दुःख-तकलीफों को भूलो। कौन कैसा है, जिसे दुःख तकलीफें नहीं हैं। भूल जाओ, उधर से चित्त हटा लो, चिंता से आँखें फेरकर आशा की ओर लगाओ, कटुता से मन मोड़ लो।

दूसरों के प्रति तुम्हारे मन में घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, दुर्भाव आदि के जो घाव हैं, उनमें भीतर ही भीतर मवाद भर रहा है और यह तुम्हारे ही शरीर, मन, प्राण, में भयंकर मानसिक विष उत्पन्न कर रहा है। क्यों इस जहर से आत्म हत्या करते हो ? जीवन का आनंद क्यों नहीं लेते ? फिर क्यों न इन तमाम बातों को अपने दिल से निकाल फेंको, हृदय से बहा डालो। तुम देखोगे कि जीवन के उज्ज्वल पक्षों पर स्थिर रहने से तुम्हारे भीतर ऐसी पवित्रता, ऐसी सफाई आयेगी कि तुम्हारा शरीर और मन पूर्णतः स्वस्थ और निर्मल हो जायेगा ... इन वेदनाओं के विषय में पुनः-पुनः सोचकर क्यों अपने हाथों अपनी हत्या कर रहे हो ? शायद तुम इन बातों को नहीं जानते। इसीलिए तो कहता हूँ—चिंताओं को भूल जाओ, कटु अनुभूतियों को विस्मृत कर दो।

और बड़े-बड़े संकट, विपत्ति, दुःख के समय क्या करें ? यदि हमारे ऊपर दुःखों का पर्वत टूटा हो, विपत्ति की बिजली गिर गई हो, किसी ने हमारे सत्यानाश की युक्तियाँ सोची हों और कोई हमारा परमप्रिय व्यक्ति हमें तड़पता छोड़कर मृत्यु के मुख में समा गया हो—ऐसे अवसरों पर जब हमारा घाव गहरा और मर्मांतक है, तो हम क्या करें ? क्या उन्हें भी भूल जाँय, विस्मृत कर डालें ? हाँ, हाँ, उन्हें भी भूल जाओ। धीरे-धीरे ही सही, किन्तु विस्मृत कर दो उन्हें भी। इसी में तुम्हारी भलाई है। भविष्य में इससे तुम अधिक से अधिक सुख पाओगे, शांति पाओगे।

दुःख की, चिंता की, बीमारी की बातें न करो, न सुनो। स्वास्थ्य की, आनंद और प्रेम की, शांति और सौहार्द की बातें करो

और इन्हीं को सुनो। देखोगे कि तुम स्वास्थ्य लाभ करोगे, आनंद लाभ करोगे, प्रेम पाओगे, शांति पाओगे।

और मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ, सच मानो कि दुःखों का भार उतार डालना कतई मुश्किल नहीं है। बड़ा ही आसान है। शुरू-शुरू में आदत डालने में कुछ समय लगेगा, संभव है, कुछ कठिनाई भी हो, लेकिन आदत पड़ जाने पर बात ही बात में तुम बड़ी से बड़ी चिंता को चुटकियों पर उड़ा दोगे और इस प्रकार भूल जाने या भुला देने में तुम इतने अभ्यस्त हो जाओगे कि जीवन को दुःखमय और विषाक्त कर देने वाली तमाम बातें तुम्हारे सामने आते ही काफूर हो जायेंगी। यह संसार तुम्हारे लिए आनंदमय प्रतीत होगा और दुःख, अभाव, पीड़ा, कष्ट इत्यादि कोई दुष्ट भाव मन में न रह जायेगा।

भूलना सीखो। यदि शरीर का स्वास्थ्य और मन की शांति अभीष्ट है तो भूलना सीखो। चिंता से मुक्ति पाने का सर्वोत्तम उपाय दुःखों को भूलना ही है।

आशावादी दृष्टिकोण का चमत्कार

रोम पर विचार जगत् में राज्य करने वाले दार्शनिक मारकस ओरिलियस ने कहा है कि तुम्हारे जीवन का चिंतित या प्रफुल्ल होना केवल तुम्हारे दृष्टिकोण पर निर्भर है। वास्तव में "हमारा किसी घटना के प्रति क्या दृष्टिकोण है ?" यह तत्त्व हमारे मानसिक जगत् का निर्माण किया करता है। यदि हमारा दृष्टिकोण अपने जीवन के सुखद, मोददायी, आशावादिता से परिपूर्ण पहलू की ओर है तो निश्चय जानिये आप मन में दुःखों से घिरे रहकर भी प्रसन्न और आशावादी रहेंगे। जीवन के दुःखद् प्रसंगों को देखने वाला हर तरह उन्नत वातावरण में भी दुःखद तकलीफें ही देखता रहेगा।

उदाहरण के लिए श्री अनंत गोपाल शेवड़े द्वारा दिये अग्र मनोवृत्तियों वाले व्यक्तियों को देखिये—

"आफत को आफत मानना या न मानना हमारे हाथ की बात है। कुछ घटनाएँ ऐसी होती हैं, (जैसे मकान में आग लग जाना या प्रिय व्यक्ति की मृत्यु, दिवाला, मुकदमे में हारना, लंबी बीमारी, कारावास, पुत्री का विवाह, पुत्र की शिक्षा इत्यादि), जो थोड़ी बहुत असुविधा जरूर देती है, पर हम उन्हें अतिरंजित दृष्टि से बढ़ा-चढ़ा देखकर मुसीबतें मानने लगते हैं। रस्सी को साँप मानकर काँप उठने वाले व्यक्ति हमारे समाज में कम नहीं हैं। जेल में मेरे एक साथी थे, जिन्हें १।। साल की सजा हुई थी। रोज दिन गिनते थे कि "कब छूटेंगे, कब छूटेंगे ?" मैंने कहा—"अरे, अब तो डेढ़ साल की जगह एक साल ही बचा है। उसे जाते क्या देर लगती है।" कारावास के काले सींकचों में से कोई जमीन की कीचड़ या जेल की दीवार का टुकड़ा देखता है, तो कोई आसमान के तारे देखकर खुश हो लेता है।"

जब मैं बोर्डिंग में था, तो अपने कमरे के साथी के साथ आवश्यक चीजें साझे में खरीदा करता था। खुशबूदार तेल की बोतल जब आधी रह गई तो वह बोला—"देखो यार ! तेल कितनी जल्दी खतम हो गया है। दास दिन में बोतल आधी खाली हो गई।"

"अरे यार, यह खाली कहाँ हो गई ? अभी तो वह आधी भरी है"—मैंने कहा।

ऊपर लिखे उदाहरणों पर गंभीरता से विचार कीजिए। इनमें दो दृष्टिकोण स्पष्ट समझ में आते हैं। लेखक का हँसता-खेलता, दूसरों को प्रोत्साहित करता हुआ आशावाद है, जो जीवन की अच्छाई को देखता और उससे प्रेरणा प्राप्त करता है। दूसरा निराशावादी दृष्टिकोण है, जो सब कुछ होते हुए भी चिंता की महाव्याधि से अधमरा हुआ जाता है। जितने दिनों में आप मिथ्या भय की चिंता में अधमरे हो जायेंगे, उतने दिनों में आशावादी प्रसन्न-मुद्रा में इतनी शक्ति और साधन एकत्रित कर लेंगे कि वे घटनाएँ उस पर कुछ प्रभाव न छोड़ जायेंगी। कैसे दुःख की बात

है कि हम अपना गलत कंगाल दृष्टिकोण नहीं बदलते। हमें आशा का, उत्साह का और अपने हित का दृष्टिकोण ही अपनाना चाहिये।

सर वाल्टरस्काट का उदाहरण हमें प्रेरणा देने वाला है, एक प्रेस लेकर चलाने के संबंध में वाल्टर स्काट के ऊपर इतना ऋण हो गया कि साधारण मनोबल वाला व्यक्ति उसके मानसिक भार से पागल हो जाता, किंतु वाल्टर स्काट ने मनःस्थिति को विचलित नहीं किया, निरंतर तीस चालीस वर्ष उपन्यास लिखकर उनकी आय से संपूर्ण ऋण उतार डाला।

लोबल टामस को भी ऋण का सामना करना पड़ा। भयंकर निराशाएँ प्राप्त हुईं, परंतु इन सबके बावजूद वे चिंतित कभी नहीं हुए थे। वे जानते थे कि यदि वे ऋण के संबंध में चिंतित हुए तो उनकी उत्पादक और सृजनात्मक शक्ति पंगु हो जायेगी और उनके कर्जदार उन पर मक्खियों की तरह भिनभिनाने लगेंगे। अतः प्रत्येक दिन प्रातःकाल वे एक पुष्प खरीद लेते थे और कोट के बटन में लगा लेते थे। फिर मधुर संगीत उच्चारण करते हुए टहलने ऑक्सफोर्ड स्ट्रीट की ओर निकल जाते थे। वे मन में निर्भयता, वीरता और आशावादिता के विचार रखते थे और विषम परिस्थितियों से न हारते थे। वे परिस्थितियों को अपने पक्ष में करने में युक्ति और निरंतर प्रयत्न करते रहते थे।

दृष्टिकोण में अंतर आने से मन कैसा शक्तिशाली या कमजोर हो सकता है, यह तत्त्व आपको जे० ए० हैडफील्ड की पुस्तक "शक्ति का मनोविज्ञान" के इस उदाहरण से स्पष्ट हो जायेगा। वे लिखते हैं कि "मैंने तीन व्यक्तियों की शक्तियों की परीक्षा मानसिक संकेत के अभाव में की हैं। यह शक्ति परीक्षा डाइनामोमीटर को पकड़ने के द्वारा हुई थी। मैंने उनसे डाइनामो मीटर की मजबूती से पकड़ने की आजादी और तीन विभिन्न मानसिक स्थितियों में उनकी शारीरिक शक्तियों को जाँचा।

जब मैंने इन्हें साधारण औसतन रूप में कार्य करते हुए जाँचा तो उनकी औसत पकड़ने की शक्ति १०१ पौंड थी। फिर मानसिक संकेत द्वारा उन्हें यह सुझाया गया कि वे कमजोर हो गए थे। उनमें निर्बलता के चिन्ह प्रकट हो गये थे। इस संकेत का ऐसा घातक प्रभाव उन पर पड़ा कि उनकी पकड़ने की ताकत केवल २६ पौंड रह गई। फिर उन्हें सम्मोहन द्वारा और भी कमजोरी, निर्बलता, शक्तिहीनता के पुष्ट संकेत बार-बार दिये गए। फलस्वरूप वे इतने निर्बल हो गये कि उनमें से एक तो यहाँ तक कह उठा कि मुझमें एक छोटे शिशु जितनी भी ताकत नहीं है। मैं एक शक्तिहीन बच्चा हूँ। मेरे अंग-अंग शिथिल हो गये हैं।

फिर उन व्यक्तियों को सृजनात्मक और पुष्ट-संकेतों में रखकर शारीरिक शक्ति की परीक्षा की गई। "तुम मजबूत हो, तुम शक्तिशाली हो।" इन संकेतों का ऐसा चमत्कारी प्रभाव हुआ कि उनकी पकड़ने की शक्ति १४२ पौंड हो गई। उत्साहवर्द्धक संकेतों से उनकी शारीरिक शक्तियों में पाँच सौ प्रतिशत तक वृद्धि होती देखी गई है। दृष्टिकोण का कितना प्रभाव होता है, यह उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है।

एक बार ईसा महान् के पास एक बीमार व्यक्ति खाट में लेटा हुआ लाया गया। ईसा का दृष्टिकोण सदैव प्रफुल्ल, शक्तिपूर्ण, आशावाद से भरा हुआ था। बीमार व्यक्ति से वे बोले—"पुत्र, प्रसन्न हो जाओ .... तुम्हारे पाप परमेश्वर द्वारा माफ किए जायेंगे .... खड़े हो जाओ और पैदल चलकर घर जाओ।" इन दृढ़ता और आत्मविश्वास से परिपूर्ण संकेतों का ऐसा अद्भुत असर हुआ कि बीमार सचमुच उठ खड़ा हुआ और घर की ओर चलने लगा। बीमार का कथन था कि "इन उत्साहवर्द्धक प्रेरक शब्दों का उसके ऊपर ऐसा चमत्कार हुआ जैसे अंदर से कोई शक्ति का केंद्र फूट पड़ा हो।

डेल कार्नेगी का तो विचार है कि आशावादी उत्साहवर्द्धक दृष्टिकोण से मनुष्य चिंता, भय और भाँति-भाँति की अनेक

बीमारियों को बखूबी निकालकर फेंक सकता है। जीवन के प्रति उसे प्रेम करना चाहिए। सहानुभूति से अपनी चिंताओं के कारणों को दूर कर हितैषी भावनाओं से रमण करना चाहिए।

डि० लारसन का कथन है कि नवीन मानस शास्त्रज्ञों ने खोज की है कि जीवन में ऐसी बहुत कम वस्तुएँ हैं, जिनका प्रभाव प्रसन्नता से अधिक हमारे मन तथा शरीर पर होता है। आत्मा शरीर तथा मन सबका मुख्य सामर्थ्य आनंद ही है। आनंद विषयक दृष्टिकोण न जानने से हजारों मनुष्यों का नाश हो गया है अतः दीर्घ जीवन आनंद और स्वास्थ्य के लिए मनुष्य को चिंतित न रहना चाहिए।

शरीर, प्रसन्नता, आशा, उल्लास, शांति की माँग करता है। आवश्यक तत्त्व न प्राप्त होने से आत्मा को भी कष्ट होता है। हमें प्रसन्न और उल्लासमय रहकर शरीर की माँग को पूरा करना चाहिए।

मनःशांति, प्रसन्नता प्राप्ति के अमोघ उपाय

प्रसन्नता का अभिनय करें—

मनोविज्ञान का यह नियम है कि हम अपने कार्यों द्वारा जैसा अभिनय करते हैं, वैसा ही भाव अंदर मन में अनुभव भी करते हैं। बाह्य प्रसन्नता का अभिनय हमें मानसिक जगत् में आनंद देता है। कभी-कभी हम दूसरों को दिखाने के लिए आनंद, उल्लास, प्रसन्नता की मुख मुद्रा बनाते हैं, मुस्कराते हैं या खिलखिलाकर हँस उठते हैं, तो हम अंदर मन में भी उस आनंद की अनुभूति प्राप्त करते हैं। जैसा बाह्य स्वरूप, वैसी मनः स्थिति का निर्माण-यही सिद्धांत है।

फिर आप क्यों निराशा, दुःख, तकलीफ की मुख मुद्रा बनाते हैं ? क्यों बाहर से मुहर्रमी लिबास में रहते हैं ? प्रसन्नता का बाना पहनिए। प्रसन्नता के कार्य कीजिए। इष्ट मित्रों के साथ रहकर दो क्षण हँसी-खुशी से व्यतीत कीजिए। जब चार मित्र हँसेंगे, बोलेंगे,

उनके साथ आप भी प्रसन्नता का अनुभव करेंगे। आज आप प्रसन्न रहें, कल देखा जायेगा। संभव है, यह आज की प्रसन्नता का अभिनय आपके स्वभाव का एक अंग बन जाए।

कम से कम आज यह करें—

आपको चाहिए कि आप यह प्रतिज्ञा करें—"मैं स्वयं आनंदित होऊँगा और अपने संपर्क में आने वाले दूसरे व्यक्तियों को आनंदित करूँगा। कम से कम आज के लिए मैं जैसी परिस्थितियों में हूँ, उन्हीं में बिना चिंता के आनंद और संतोष के साधन एकत्रित करूँगा। मैं अपने परिवार, पेशा या व्यापार और भाग्य जैसा मेरे साथ आते हैं, उन्हीं को सुंदर बनाने और खुश रहने का प्रयत्न करूँगा।

कम से कम आज मैं अपने शरीर की उचित देखरेख करूँगा। उसमें कहीं टूट-फूट, कमजोरी या शैथिल्य आ रहा है, उसे दूर करने का प्रयत्न करूँगा, पौष्टिक तत्त्व दूँगा, विश्राम और मनोरंजन दूँगा। शरीर की ओर से लापरवाही नहीं करूँगा। शरीर रूपी इस बहुमूल्य मशीन का उचित संचालन और उन्नति के साधन काम में लाऊँगा।

कम से कम आज मैं अपने शरीर को बलवान् बनाने की चेष्टा करूँगा, मैं आज कोई महत्त्वपूर्ण उपयोगी कार्य करूँगा। नीरस और शुष्क विषय के अध्ययन में मन को नहीं लगाऊँगा। मैं दृढ़ता से अपने मन को गंभीर उच्च विषयक तत्त्वों में संलग्न रखूँगा।

मैं आज अपनी आत्मा को मजबूत बनाने का काम शुरू करूँगा। मैं किसी के प्रति आज कोई अच्छा सहायता का कार्य करूँगा। मैं प्रसन्न रहूँगा और दूसरों को आकर्षित करूँगा। मैं आज इतना सुंदर बनने का प्रयत्न करूँगा जितना कि मैं संभवतः हो सकता हूँ। मैं दूसरों की चुगली न करूँगा, मिथ्या दोष दर्शन में न पड़ूँगा। गुणों की उदारतापूर्वक प्रशंसा करूँगा, न दूसरों के सुधार में व्यर्थ चिंतित हूँगा। मैं आज दिन भर एक आदर्श रूप में जीवन को व्यतीत करूँगा, सारे जीवन के जंजाल या समस्याओं में एक दम न

फँस जाऊँगा। मैं दो शत्रुओं को मार भगाऊँगा—जल्दबाजी तथा अनिश्चितता को। इनका वास मेरे चरित्र में न रहेगा।

शत्रु भाव से मुक्त रहिए—

जब हम अपने शत्रुओं से घृणा करते हैं, तो हम उन्हें अपने मानसिक जगत् पर हावी कर लेते हैं। आंतरिक मन में उनका डर हमें सदा-सर्वदा बना ही रहता है। ये हमारी निद्रा, हमारी भूख, हमारे रक्त संचालन, हमारे स्वास्थ्य और हमारी प्रसन्नता को नष्ट कर धूल में मिला देते हैं। यदि आपके शत्रुओं को यह मालूम हो जाए कि आप उनके बारे में सोचा करते हैं या चिंतित रहते हैं तो उन्हें इतने प्रसन्नता होगी, कि वे खुशी से नाच उठेंगे। हमारी घृणा केवल उन्हीं को हानि नहीं पहुँचाती, वरन् यह घृणा पिशाचिनी हमारे रात-दिन को भी नर्क बनाती है।

यदि स्वार्थी व्यक्ति आपसे अनुचित लाभ उठाना चाहें, तो उन्हें अपनी मित्र मंडली की सूची से पृथक् कर दीजिए, किंतु उनसे लड़ाई-झगड़ा कर कटुता उत्पन्न न कीजिए, अन्यथा यह कटुता आपकी मन: शांति भंग कर देगी। जब आप उनके प्रति कटुता की भावनाएँ मन में रखते हैं, तो आप अपने आपको हानि पहुँचाते हैं। जिन व्यक्तियों को हाई ब्लडप्रेशर होता है, उसका कारण उनके मन में अपने शत्रुओं के प्रति क्रोध और घृणा से उत्पन्न अनुचित तनाव है। जब क्रोध और ईर्ष्या पुराने मानसिक रोग हो जाता है, तब हृदय की अनेक व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं।

यही कारण है कि ईसा महान् ने कहा है, "अपने शत्रुओं से प्रेम करो।" ईसा तत्कालीन नीति की ही बात नहीं कर रहे थे, वरन् वे मानसिक रोगों की दवाई बता रहे थे। जब उन्होंने कहा, 'सौ में निन्यानवे बार क्षमा कीजिए' तो वे हमें हृदय रोगों, पेट के घावों तथा पाचन संबंधी अनेक रोगों से बचने का मार्ग बता रहे थे। जो व्यक्ति निरंतर क्रोध या घृणा में फँसा रहता है, उसके मुख पर स्थायी झुर्रियाँ और वृद्धावस्था के चिह्न प्रकट हो जाते हैं। असमय ही यौवन विलुप्त हो जाता है।

यदि हम अपने शत्रुओं को प्रेम नहीं कर सकते, कम से कम हमें अपने आपको तो प्रेम करना चाहिए। हम अपने आपको इतना प्रेम करें कि हमारे शत्रु हमारी मनः शांति भंग न कर सकें। अतः आइये हम उन्हें भूल जांय। उनकी हमारे प्रति की गई अशिष्टताओं को क्षमा करें।

इन दुष्टों की चिंता से मुक्ति पाने का एक उत्तम उपाय यह है कि आप उन व्यक्तियों के विषय में सोचें ही नहीं, जिन्हें आप नापसंद करते हैं। सबसे दोस्ती, सबसे प्रेम रखने का दृष्टिकोण, मैत्री भावना का अभ्यास हमारे मन के क्रोध, स्वार्थ, ईर्ष्या, अभिमान, राग-द्वेष, छल-प्रपंच को नष्ट कर मनः शांति प्रदान करती है। मैत्री भावना एक अमोघ अमृत है। मैत्री भावना को हृदय के अंतस्थल में बसा लेने से ईर्ष्या प्रतिशोध, दुर्भावना उद्वेग दूर हो जाते हैं। सबसे मैत्री रखने वाला संयमी सबका प्रिय होता है। रात्रि में वह मधुर निद्रा का आनंद प्राप्त करता है। धीरे-धीरे उसके शत्रु भी उससे शत्रुता भूलकर प्रेम करने लगते हैं। मैत्री भावना मनुष्य को सबके प्रति चाहे मित्र हो या शत्रु, पापी हो या पुण्यात्मा— सौहार्द्र प्रेम, बंधुत्व सहानुभूति का पवित्र भाव रखना सिखाती है। मैत्री के अभ्यास से हम इन्हीं सद्गुणों की फुलवारी अपने मन रूपी उद्यान में लगाते हैं।

मनशांति का मजा लेने का एक उपाय यह है कि हम अपने शत्रुओं के विषय में न सोचें, न विचारें, प्रत्युत उन्हें मनः पटल से निकाल दें। जब हम उनके प्रति घृणा और प्रतिशोध की भावनाओं में डूबे रहते हैं तो उनकी अपेक्षा हमारी घृणा और प्रतिशोध का विष हमें अधिक हानि पहुँचाता रहता है।

कृतज्ञता की आशा न रखें—

अनेक व्यक्ति इस भावना से परेशान और चिंतित रहते हैं कि दूसरों ने उनकी सेवा, कृपा, भलमनसाहत या अच्छाई का कोई पुरस्कार नहीं दिया। कृतज्ञता के दो मीठे शब्द भी न रहे। दूसरों

की, उनके प्रति कठोरता, शुष्कता सख्ती उन्हें हमेशा चिंतित रखती है। वे प्रायः कहा करते हैं—

"दुनिया भी कैसी स्वार्थी और खुदगर्ज है ? हमने अमुक के साथ कितनी भलाई की। रुपये, पैसे, शरीर सद्भावनाओं से सहायता की पर हमारी जरूरत के समय उसने आँखें फेर लीं। हमारी सज्जनता का यह शुष्क स्वागत है।"

ये भावनाएँ तर्क की कसौटी पर उचित हैं। लेकिन स्मरण रखें संसार कठोर है। सब व्यक्ति उस मानसिक, भाव संबंधी या नैतिक स्तर पर नहीं हैं, जिस पर आप हैं। कृतज्ञता तो शिक्षा, संस्कृति, अच्छे वातावरण की देन है। यदि कोई कृतज्ञता नहीं दिखाता, तो समझ लीजिए कि वह मूर्ख है, असंस्कृत है। आपकी दया का पात्र है।

आप किसी से 'नमस्ते या सलाम' की भी आशा मत रखिए। यदि किसी के साथ आपने भलाई की भी है, तो उसे भूल जाने में ही श्रेष्ठता है क्योंकि उसका प्रतिदान यदि उसी अनुमान में आपको प्राप्त न हुआ, तो आप वृथा ही मन में दुःखी रहेंगे। 'मुझे किसी की कृपा, प्रोत्साहन, कृतज्ञता की आवश्यकता नहीं। मेरी आत्मप्रेरणा ही सब कुछ है'—यही आत्म विश्वास सर्वत्र विजयी होता है और सुख प्रदान करता है।

एक सायंकाल ईसा महान् ने दस कोढ़ियों को अपनी प्रार्थना और अध्यात्मिक शक्ति से निरोग किया । किंतु क्या आपको ज्ञात है कि कितने कोढ़ी उन्हें धन्यवाद देने के लिए रुके ? केवल एक। जब ईसा अपने शिष्यों की ओर मुड़े और कहा—'शेष नौ कहाँ गये ?' उन्हें बताया गया कि 'स्वस्थ होते ही वे चुपचाप खिसक गये थे, बिना धन्यवाद दिये, बिना कृतज्ञता का एक शब्द उच्चारण किए हुए।'

जब ईसा जैसी महान् आत्मा के साथ ऐसा अकृतज्ञतापूर्ण व्यवहार हुआ, तो आप क्यों संसार से अच्छे व्यवहार की आशा रखते हैं ?

मारकस ओरिलियस ने अपनी डायरी में एक स्थान पर लिखा है, "मैं आज ऐसे लोगों से मिलने जा रहा हूँ, जो मिथ्या बातें बहुत बनाते हैं, अंदर से ये व्यक्ति स्वार्थी, अहंभावी अकृतज्ञ हैं। लेकिन मैं न इस अकृतज्ञता से आश्चर्यचकित हूँ और न चिंतित ही, क्योंकि मैं जानता हूँ कि अधिकतर व्यक्ति दुनिया में ऐसे ही हैं।"

डेल कार्नेगी का विचार है कि, "यदि हम आनंद लूटना चाहते हैं, तो हम कृतज्ञता-अकृतज्ञता को बिल्कुल भुला दें और जिसे देना हो, उसे कुछ भी इस भाव से दें कि वह हमें इसका कोई प्रतिदान नहीं देगा। हम दूसरों से बदले में कुछ भी पाने की आशा न रखें यही उत्तम है।"

अतः स्मरण रखिए, प्रसन्न रहने का मार्ग यह है कि आप दूसरों की कृतज्ञता, उत्साह, प्रेरणा, प्रोत्साहन या किसी प्रकार की भी सहायता की भावना मन से निकाल डालें। "मुझे दूसरे की किसी प्रकार की भी सहायता नहीं चाहिए। मेरे पास सब कुछ है"—यह भावना मन में रखकर कार्य करें। जिसे कुछ देना है उसे निःस्वार्थ भाव से बिना कुछ प्रतिदान पाने की कामना किये बिना ही दें। कृतज्ञता तो विशेष अंतः विकास से प्राप्त होती है। अतः यदि हम अपने बाल-बच्चों से कृतज्ञता पाने की इच्छा रखते हैं, तो हमें उनमें यह गुण विशेष रूप से विकसित करना चाहिए।

आप कितने भाग्यशाली हैं ?

चाहे आप जैसी स्थिति में क्यों न हों, आपको ऐसी अनेक वस्तुएँ या गुण अपने अंदर मिल जायँगी, जो दूसरों के पास नहीं है। आपकी ये चीजें आपको दूसरों की अपेक्षा उन्नत भाग्यशाली और उच्च बनाती हैं। एक उदाहरण लीजिए—

एक बार हैराल्ड एबोट नामक एक व्यक्ति की संपूर्ण जीवन की कमाई नष्ट हो गई, ऋण चढ़ गया, जिसे साफ करने में उन्हें सात वर्षों की आवश्यकता थी। वे नई दुकान खोलने के लिए

और रुपया कर्जा लेने जा रहे थे। मन आर्थिक चिंताओं से भरा हुआ था। किस प्रकार ऋण उतरे गृहस्थी का कार्य कैसे चले ? सामाजिक प्रतिष्ठा कैसे कायम रहे ? वे एक पराजित व्यक्ति के समान दुःखी भारी मन से सड़क पर चले जा रहे थे कि उन्हें सड़क के किनारे बैठा हुआ एक व्यक्ति मिला, जिसके टाँगें नहीं थीं। कट गई थीं। वह हाथों के सहारे चलता था। उसने हैराल्ड साहब का हँसते हुए स्वागत किया। उसने हृदय का उत्साह और प्रसन्नता उड़ेलते हुए कहा, "नमस्ते, क्या सुहावना प्रभात है ? कहिए, अच्छे तो हैं ?' इस व्यक्ति के प्रसन्न जीवन ने, भीषण कठिनाई तथा अंगभंग में भी उल्लास और हर्ष से परिपूर्ण जीवन ने उनका जीवन बदल दिया। उन्हें अपनी चिंता पर आत्मग्लानि प्रतीत हुई। उन्हें प्रतीत हुआ कि उनकी टाँगें परमेश्वर का कितना बड़ा वरदान थीं ? उन्हें अपनी निराशा और चिंता पर हार्दिक क्षोभ हुआ। उन्होंने सोचा कि जब वह कटी हुई टांगों वाला गरीब व्यक्ति प्रसन्न, उल्लसित हो सकता है और जीवन का रस लूट सकता है, तो वे उससे भी अधिक अंशों में मजा ले सकते हैं। इस भाव ने उनकी चिंता को उल्लास में बदल दिया और वे उन संपदाओं को देखने लगे, जो अब भी उनके पास परमेश्वर की देन के रूप में सुरक्षित थीं।

आप स्वयं देखिए—क्या आपका स्वास्थ्य वह चीज नहीं है कि आप उसके ऊपर गर्व कर सकें, आपका घर, परिवार, वस्त्र इत्यादि यदि कीमती नहीं हैं, तो न सही, क्या परवाह है ? आपकी आय यदि थोड़ी है तो कोई हर्ज नहीं, इन गरीबों को देखिए जो रोज मजदूरी से पेट पालते हैं। रुपया जोड़कर क्या कीजिएगा ? आगे आपके बाल बच्चे आपकी सहायता करेंगे। फिर क्यों चिंता करते हैं ?

हमारे जीवन में नब्बे प्रतिशत बातें ठीक हमारे स्वभाव के, हमारे पक्ष के, हमारी सुख-सुविधा, प्रसन्नता, लाभ के लिए होती हैं। केवल दस प्रतिशत ऐसी होती हैं, जिनके विषय में हमें कुछ सोचने

की आवश्यकता है, चिंता की नहीं। हमें प्रसन्न होने के लिए इस बात की जरूरत है कि हम अपने पक्ष की इन नब्बे प्रतिशत भाग्यशाली चीजों को देखें और उन पर चित्त को एकाग्र करें और दस प्रतिशत विपक्ष की वस्तुओं को त्याग दें। उनके बारे में न सोचें।

अपने अभाव का, अपनी कमजोरियों का, अपने पास जो-जो वस्तुएँ नहीं हैं, उनका चिंतन करना, अपनी उत्पादक और सृजनात्मक शक्तियों का क्षय करना है।

बिगड़ी बात बनाई जाए—

जो-जो हानियाँ, दुःख, तकलीफें आप जीवन में उठा चुके हैं, उन्हें झींकने, कलपने या आँसू बहाने से कोई लाभ नहीं है। हानि पर दुःख और निराशा तो हर एक व्यक्ति प्रकट कर सकता है। रोना, चीखना और कायरता दिखाना तो मामूली सी बात है। महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि हानि से अधिकतम लाभ उठाया जाए, बिगड़ी बात को बनाया जाए, टूटे को दुरुस्त किया जाए, रूठे को मनाया जाए और अणु-अणु एकत्रित कर विशृंखलित चीज को संपूर्ण बनाया जाए। बिगड़ी को बनाने के लिए बुद्धि और चातुर्य की आवश्यकता है। हानि पर रोने के लिए आलस्य, कायरता और मूर्खता की जरूरत है। फिर क्यों मूर्ख बनें ? क्यों न अपनी चिंता के कारण को दूर कर उसे आशा, उन्माद और प्रेरणा में परिवर्तित कर लें।

सूर और मिल्टन अंधे हो गये थे, किंतु उन्होंने अपने अंधेपन का सदुपयोग किया और अंतर चक्षु खोल लिए, भावी कवि बने। कर्ण और ईसा में वंश की कमी थी, अष्टावक्र, चाणक्य और सुकरात में शारीरिक सौंदर्य की कमी थी; नेपोलियन और हिटलर को धन और पारिवारिक प्रतिष्ठा की कमी थी; ध्रुव, कृष्ण, बुद्ध को संबंधियों के प्रेम की कमी थी लेकिन वे महापुरुष इन कमजोरियों और सामाजिक त्रुटियों के बावजूद कभी चिंतित नहीं हुए। उन्हें जितनी कठिनाइयाँ और प्रतिद्वंद्वी मिले, कितने कष्ट मिले, लेकिन

अपनी दृढ़ता, आत्मशक्ति एवं सतत् उद्योग के द्वारा उन्होंने चिंता और नैराश्य भावना को समीप न आने दिया। वे कष्टदायक परिस्थितियों में भी महान् बनें।

फिर आप क्यों अपनी मामूली सी बातों के प्रति चिंतित हैं ? क्यों आप तिल का ताड़ बनाते हैं ? ऊपर लिखे व्यक्तियों के मुकाबले में आपकी चिंता का कारण कुछ भी तो नहीं है। व्यर्थ की चिंता त्याग दीजिए।

दूसरों को प्रसन्न करने का उद्योग करें—

चिंता से मुक्ति का एक उपाय यह है कि आप अपने आपको दूसरों की प्रसन्नता, सेवा, सुख पहुँचाने में निज सुख तकलीफों को विस्मृत कर दें। आप अपने मित्रों की संख्या निरंतर बढ़ायें और उनमें, उनके हास्य रुदन, जीवन के सब प्रसंगों में तन्मय हो जाएँ।

सेवा का मार्ग ढूँढ़ निकालें। संसार में पीड़ित, रोगी, निरालंबों की कमी नहीं है, जो आपकी सहायता के लिए खड़े हैं। उन्हें प्रोत्साहन देने वाले पत्र लिखिए, मुस्कराकर बातें कीजिए, उनके काम में दिलचस्पी प्रदर्शित कीजिए। अपनी रुचि तथा दिलचस्पी को दूसरों में जोड़ लेने से मनुष्य अपनी चिंताएँ भूल जाता है। आप अपने कुटुंब के बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन में दिलचस्पी ले सकते हैं, अपनी पत्नी के आत्म विकास, शिक्षा, कारीगरी, कढ़ाई-बुनाई या भोजन के प्रति प्रोत्साहन देकर उन्हें आगे बढ़ा सकते हैं। मनुष्य को इस पृथ्वी पर कुटुंब से जो सहानुभूति, समवेदना, मधुरता और प्रेम का प्रतिदान प्राप्त हो सकता है, वह चिंता के बोझ को हल्का कर देता है। अतः प्रति दिन एक ऐसा भला कार्य किया करें, जिससे किसी दूसरे व्यक्ति के मुख पर प्रसन्नता आये और आंतरिक सुख उत्पन्न हो। उनमें दिलचस्पी लेकर अपनी चिंता दूर करें।

□□

चिंता पर विजय प्राप्त करने का सुनहरा नियम

हार्वर्ड युनिवर्सिटी के मनोविज्ञान के प्रोफेसर विलियम जेम्स ने कहा है—"चिंता पर विजय प्राप्त करने का सर्वोत्तम उपाय धार्मिक विश्वास है।"

वास्तव में आनंद पूर्वक परम प्रभु परमात्मा की भक्ति उनका भजन, कीर्तन, प्रेम से उनके गायन, सत्संग इत्यादि सत्कर्मों में लीन हो जाना सांसारिक चिंताओं से मुक्ति का सर्वोत्तम उपाय है। भक्ति ही आनंद का वह मार्ग है, जो स्थायी एवं व्यापक सुख-शांति प्रदान करने वाला उपाय है। भक्त संसार को ईश्वरमय देखता है। जो व्यक्ति संसार को मैत्री भाव से देखता है, संसार को प्रेम रूप देखता है, उस मनुष्य पर ईश्वर भी प्रेम की वर्षा करता है। प्रसन्नता, धैर्य, आशा, प्रशांति श्रद्धा प्रेम और आनंद—इन लक्षणों से युक्त मनुष्य का नैसर्गिक स्वभाव होना चाहिए।

मनुष्य के सारे दुःखों का कारण यह है कि वह ईश्वरीय आदेशों के प्रतिकूल चलना पसंद करता है। जगत् की मिथ्या वस्तुओं के प्रति व्यर्थ के माया-मोह में लिप्त हो जाने के कारण ईश्वरीय प्रेम और आनंद का यह मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। दैवी प्रसन्नता तथा आनंद के इस स्रोत को खोलने से ही उसे शांति प्राप्त हो सकती है।

पाप ग्रसित मनुष्यों को यह संसार अंधकारमय नैराश्य से परिपूर्ण प्रतीत होता है। जहाँ पर मनोविकार एवं स्वार्थपरता है, वहीं पर मानसिक नर्क है। जहाँ पवित्रता और प्रेम है, वहीं पर मोक्ष है।

आप ईश्वरीय अंश हैं, सतत् आनंदमय हैं। श्रुति भगवती की आनंदमयी वाणी में, **"आनंदाद्धयेव खल्विमानि भूतानि, जातानि आनंदेन जानाति जीवन्ति।"** आनंद से ही सब प्राणी जन्मते हैं और आनंद के लिए ही जी रहे हैं। हमारे आत्मा का स्वरूप आनंद ही है। फिर शोक, चिंता, निराशा में डूबने की क्या आवश्यकता

है ? यदि हम परमार्थिक दृष्टि प्राप्त कर सकें, तो अपने गंतव्य धाम-आनंद को प्राप्त कर सकेंगे। भक्ति ही आनंद प्राप्ति का राजमार्ग है।

ईसा महान् कहा करते थे कि धर्म के केवल दो ही स्वरूप हैं—(१) ईश्वर को पूरे हृदय से प्रेम करना तथा (२) अपने पड़ौसी के प्रति आत्मभाव रखना। ये दोनों ही तत्त्व बड़े महत्त्व के हैं।

चिंता के समय आप प्रार्थना करें, परमपिता परमेश्वर की गोद में, शांति और प्रेम के समुद्र में अपने आपको अनुभव करें। जिस पर परमेश्वर की कृपा है, जिस परमेश्वर के प्रति श्रद्धा है, उसे चिंता दुःखी नहीं कर सकती।

क्या आलोचनाएँ आपके चिंतित रहने का कारण हैं ?

कुछ व्यक्ति घर, समाज, वर्ग या मित्र पड़ौसियों की आलोचनाओं के कारण बड़े परेशान रहते हैं। संसार में भिन्न-भिन्न रुचि एवं दृष्टिकोणों के व्यक्ति निवास करते हैं। उनके आदर्श भिन्न हैं, रहने-बैठने बातचीत करने के तरीके भी अलग-अलग हैं। फिर आप यह क्यों आशा करते हैं कि जो कुछ आप कहेंगे, सोचेंगे अथवा कार्य करेंगे, वह सभी को पसंद आयेगा ? यह भाव मन से निकाल दीजिए कि आप प्रत्येक व्यक्ति को प्रसन्न, संतुष्ट और अपने कार्यों से सुखी रख सकेंगे। कोई भी सबको प्रसन्न नहीं कर सका है।

सन् १९२९ में शिकागो में एक आश्चर्यजनक घटना घटी। तीस वर्ष की आयु का एक व्यक्ति अमेरिका की एक युनिवर्सिटी का प्रेसीडेंट बना दिया गया। पुराने शिक्षाशास्त्रियों ने इसका बड़ा विरोध किया। यह व्यक्ति राबर्ट मेनर्ड हचिन्सन था। लोगों ने यह वह बहुत कहा, कटु आलोचनाएँ कीं, बुरा-भला कहा, समाचार पत्रों में आलोचनाएँ आईं, जिस दिन वे युनिवर्सिटी के प्रेसीडेंट बने थे उसी दिन एक मित्र ने उनके पिताजी से कहा—"आपके पुत्र के

विषय में अखबारों में कटु आलोचनाएँ आ रही हैं। आपके पुत्र की अनेक झूठी-सच्ची त्रुटियाँ निकाली जा रही हैं।" पिता ने कहा—"कोई भय नहीं। ये सब मिथ्या हैं और कुछ काल पश्चात् ये स्वयं विलुप्त हो जायेंगी।"

संसार की प्रवृति कुछ ऐसी है कि जिस व्यक्ति से अंदर ही अंदर डरते हैं, उसकी कटु आलोचनाएँ कर ये अपने आपको उसकी अपेक्षा महत्तर प्रमाणित करना चाहते हैं। आलोचना उसी व्यक्ति की, की जाती है जिसमें कुछ बड़प्पन है, कुछ गुण, ख्याति या मौलिकता है।

जो आलोचना झूठी है, उससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। ये स्वयं बंद हो जायेंगी। आप दृढ़ता से अपने काम में लगे रहिए। स्मरण रखिए, आपके विरुद्ध जो कुछ कहा या लिखा जाता है, वह बहुत कम लोग सुनते या उस पर ध्यान देते हैं। संसार के व्यक्तियों को न तुममें दिलचस्पी है, न मुझमें। उन्हें अपने तथा अपनी समस्याओं में दिलचस्पी है, दिन रात उन्हें अपने स्वार्थों से अवकाश नहीं है। उन्हें अपने सर दर्द की तुम्हारी या मेरी मृत्यु की अपेक्षा अधिक चिंता है। चाहे आपकी कितनी भी आलोचना हो, आप आत्मग्लानि में न फँसें। ईसा महान् का उदाहरण स्मरण रखें, जिन्हें उनके बारह भक्त शिष्यों में से एक ने केवल १२ डालर के लिए धोखा दिया था।

चाहे आप लोगों की आलोचना करें या न करें, वे आपके या हमारी त्रुटियाँ निकालने से बाज नहीं आयेंगे। आप एक काम करें। इनकी ओर से मुख मोड़ लें। उधर तनिक भी ध्यान न दें। मिथ्या आलोचना से मानसिक संतुलन हाथ से न जाने दें। आलोचना करने वालों को आप सबसे बड़ी सजा जो दे सकते हैं, वह यह है कि उसकी ओर ध्यान न दें। उसके घृणात्मक संकेतों को ग्रहण न करें। उलटे उनकी ओर हँस दें।

सुख तथा आनंद की वस्तुएँ—

यदि आप विवेकपूर्ण दृष्टि से देखें तो आपको प्रतीत होगा कि आपकी थोड़ी सी वस्तुओं में भी अमित सुख के आनंद मिल सकते हैं। आपकी निर्बलता यह है कि आप दूर की देखते हैं। जो आपकी दृष्टि के नीचे पड़ा है, जो वस्तुतः आपका है, जिस पर आपका पूर्ण अधिकार है, उसकी ओर से आप विमुख हो जाते हैं। दूरी में, अप्राप्य में आपका आकर्षण है समीपता में घृणा। यह मन का पलायनवाद है, जिससे आपको मुक्त करना चाहिए।

"हमारे पास सुख-संतोष की यथेष्ट सामिग्री हैं। हम अपनी थोड़ी सी वस्तुओं को इस प्रकार उपयोग में ला सकते हैं कि आनंद आये, जीवन का रस, आनंद, मजेदारी मिले, केवल हमारी युक्ति और चतुराई की आवश्यकता है"—इस भावना को गुप्त मन में दृढ़ करना चाहिए। इससे अतृप्ति दूर होकर वृत्ति अंतर्मुखी बनती है।

यदि आपके पास बड़ा मकान नहीं है, तो अतृप्त मत होइये, छोटे से घर को ही साफ-सुथरा रखिये, लीप-पोत कर सुंदर बनाइए। व्यर्थ की चीजों के संग्रह में मत लगिए।

यदि आपके पास थोड़े से वस्त्र हैं तो उन्हीं को धोकर सँवारकर पहनिए। उन्हें संभालकर पहनने से आप विद्वान् भलेमानस समझे जायेंगे। वस्त्रों के संबंध में जरा सी विवेक बुद्धि से थोड़े से कपड़ों में बखूबी कार्य संपन्न हो सकता है।

यदि आपके पास फैशन की सामिग्री नहीं है, तो इसमें दूसरों के समक्ष शरमाने की क्या बात है ? अपना स्वास्थ्य सुधार लीजिए और स्वाभाविक रूप से अपने यौवन और त्वचा को चमका लीजिए। दुनिया के सैकड़ों इत्र, फुलेल, पाउडर, क्रीम आपके प्राकृतिक सौंदर्य के सामने नत होकर रहेंगे।

खाने-पीने, सोने, उठने-बैठने, अच्छा मकान तथा ऐसी ही हजारों असुविधाएँ एक-एक कर आपको दुःखी कर सकती हैं। इन झूठी प्रवंचनाओं के विषय में चिंतन करना ही मूर्खता है। लंबी-चौड़ी

कामनाएँ कर शेखचिल्ली बनना है। यह एक असंभव माँग है कि मुझे अमुक सुविधा मिल जाती तो मैं ऐसा या वैसा बन जाता। जिन व्यक्तियों के पास धन, विद्या, मित्र, पद आदि पर्याप्त मात्रा में नहीं हैं, वे भी निरंतर आगे बढ़े हैं।

मुख्य बात आपकी बुद्धि और चतुरता है। इनके उचित और सदुपयोग से आप टूटी-फूटी चीजों में भी अधिक से अधिक आनंद लाभ प्राप्त कर सकते है।

आंतरिक संतोष, मनःशांति, समस्वरता, संतुलन—ये ऐसे महातत्त्व हैं, जिनमें व्यक्ति का आंतरिक जीवन शांतिपूर्ण बनता है।

क्या आपको ज्ञात है कि संसार के बड़े-बड़े नेता, महात्मा, विचारक, सफल जीवन व्यतीत करने वाले महापुरुष अभाव और विषम परिस्थितियों में ही आगे बढ़े हैं। विपरीत परिस्थितियों से युद्ध करने से मनुष्य की अंतःप्रतिभा जाग्रत् होती है। प्राचीनकाल में ऋषि-मुनियों के साथ रखकर बच्चों को प्रारंभ से ही अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करने की शिक्षा दी जाती थी। अमीर, राजा, जागीरदारों के बच्चे भी अभाव में पाले जाते थे, जिससे उनकी सोई हुई शक्तियाँ जाग्रत् हो उठती थीं। फिर हम अभाव से क्यों डरें ?

अपने प्रति सच्चे रहें—

हमारी चिंता का एक कारण यह बाह्य प्रदर्शन, बाहरी लिफाफा है, जो हम ऊपर से आंतरिक स्वरूप को छिपाने के लिए धारण किये रहते हैं। दूसरे शब्दों में, हम ऐसे बहुरूपिये हैं, जो सभ्यता, दिखावा, बनाव शृंगार धोखा देने के लिए समाज में अपना अतिरंजित स्वरूप प्रस्तुत किया करते हैं। हम अपने प्रति सच्चे नहीं हैं। हम अपनी असलियत को मिथ्याचार के रंग में रंगे रहते हैं। वह ऐसा अभिनय करते हैं, जैसे हम वास्तव में नहीं है।

मैं अपने एक पड़ोसी को जानता हूँ, जो मेजर थे। पाँच सौ रुपया वेतन, घर की मोटर और वह तमाम बाह्य प्रदर्शन का लिफाफा उनके पास था, जिससे आप अनायास ही इस भ्रम में पड़ सकते हैं

कि आदमी वास्तव में अमीर हैं। मैजर साहब का तबादला हुआ तो उनकी कलई खुली। उनके ऊपर न जाने कितना ऋण था कि उनके ऋण में मोटर बिकी। किराया अदा न कर सके तो गहने बिके। किसी प्रकार शहर से चले गये लेकिन नोन, तेल लकड़ी के बिल वाले बनियों ने पीछा घर तक न छोड़ा और उनके पीछे लगे रहे। यह दुरावस्था उन व्यक्तियों की होती है, जो अपने आपको अपनी अवस्था से बढ़ा-चढ़ा, शान-शौकत वाला बाह्य स्वरूप धारण किए रहते हैं। आर्थिक चिंताओं से मुक्ति के लिए आप सदैव अपने प्रति सच्चे रहिए। वैसा ही बाह्य स्वरूप धारण कीजिए, जैसे आप वास्तव में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक दृष्टियों से हैं।

डॉ० जेम्स गोर्डन कहते हैं, "अपने प्रति सच्चे रहने, जैसे वास्तव में हैं, वैसा स्वरूप रखने का नियम इतना पुरातन है जितना इतिहास और इतना सार्वभौमिक है, जितना मानव जाति।" एंजिलोपादरी लिखते हैं—"उस व्यक्ति से अधिक दुःख और कष्ट में कोई नहीं रहता, जो अपने शरीर तथा मन में जैसा वह नहीं है, उससे अतिरंजित रूप समाज, में रखने का प्रयत्न करता है।"

पाल बोंटन ने एक पुस्तक लिखी है, 'नौकरी पाने के छह उपाय'। इस पुस्तक में उम्मीदवारों की गलतियों का जिक्र करते हुए ये लिखते हैं, किसी भी जगह के लिए अर्जी भेजते समय उम्मीदवार यह बड़ी गलती करते हैं कि जैसे वे नहीं वैसे अतिरंजित, मिथ्या स्वरूप को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करने का अनाधिकार चेष्टा करते हैं। बात-चीत में सफाई से सच्चे स्वरूप को परीक्षकों के सम्मुख रखने के स्थान पर झूठी बनावटी बात बनाकर उन्हें धोखे में डालना चाहते हैं। लेकिन यह मिथ्या व्यक्तित्व दूर तक चल नहीं पाता और वास्तविकता प्रकट हो जाती है।' कोई व्यक्ति खोटे सिक्के को क्यों पसंद करेगा ?

इन नियमों का पालन करें

दूसरों की या अपनी त्रुटियों, खराबियों या चरित्र की निर्बलताओं के ऊपर नजर न रखिए। अपने पड़ोसियों से प्रेमपूर्ण

व्यवहार कीजिए। संभव है वे आपके दुःख का भार हल्का कर सकें। पड़ोसियों के मामलों में दिलचस्पी लिया कीजिए।

कल को जो-जो काम आपको करने हैं, उनकी सूची आज रात को ही बनाकर रखिए। इससे जल्दबाजी, हड़बड़ी और अनिश्चितता से उत्पन्न चिंता दूर हो जायगी।

मानसिक तनाव तथा शारीरिक थकान से दूर रहिये। ये दोनों आपको समय से पूर्व वृद्ध बना देंगे। मानसिक तनाव से यौवन में ही आपके बाल श्वेत हो जायेंगे।

विश्राम कीजिये। पर्याप्त निद्रा लें। निद्रा में कमी का अर्थ थकान, सिर दर्द और व्यर्थ की चिंता।

समय मिला करे तो शरीर की मालिश किया करें। प्रसन्नता से स्नान लें। जीवन को एक ईश्वरीय उपहार के रूप में आनंद से व्यतीत करें।

चिंताविहीन कार्य करने के लिए चार बातें स्मरण रखिये (१) अपनी मेज से वे सब कागज साफ कर दीजिए, जिनकी आवश्यकता नहीं है। उन्हीं कागजों को मेज पर रखिए, जिनमें आज की ही जरूरतें या समस्याएँ हैं। (२) क्रम से जो पहली आवश्यक बातें हैं, उनको पहले कीजिए। कौनसी बात या काम पहले हो, किसको बाद में लें, यह विवेक उत्पन्न करें। कम महत्त्व की बातों पर लग जाने से चिंता उत्पन्न होती है। (३) निश्चय जल्दी करें। टालने की आदत से समस्या का हल नहीं होता, मानसिक भार निरंतर बना रहता है। (४) कार्य या ऑफिस का उचित नियमबद्ध संचालन, समय पर सम्हाल और पर्याप्त निरीक्षण सीखिए। ये ऐसी आदतें हैं, जिनसे चिंता पास न फटकेगी।

● ●

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा